Chapter-2

द्वितीय अध्याय

(आधुनिक हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय जागरण की विकासात्मक पृष्ठभूमि

काव्य का मानव जीवन से प्रत्यक्ष सम्बंध होने के कारण समाज की सामूहिक चेतना, गतिविधियाँ, जीवन दर्शन, आशा-आकांक्षा आदि उसमें प्रतिबिंबित होने के साथ-साथ इन सभी से निर्मित युग चेतना का वह अंग भी होता है। वह जीवन धारा के बाहरी रूप के साथ-साथ अन्त: सलिला के रूप में सतत प्रवाहमान रहता है। युगीन परिस्थितियों के सन्दर्भ में पूर्ववर्ती पृष्ठों में हम यह लक्षित कर चुके हैं कि ब्रह्म समाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन तथा अन्य संस्थाओं के सुधारवादी नेताओं ने समाज की रूढ़िवादिता, संकीर्णता, कूपमंडूकता, तथा निराशा को दूर करते हुए भारतीय दृष्टिकोण में नवजीवन के रूप आशा, नवीन संस्कार तथा मान्यताओं में पर्याप्त परिवर्तन लाने का यत्न किया था अर्थात सामाजिक सुधार एवं धार्मिक उपदेशों के द्वारा समाज का पुनरुत्थान करने का सजग प्रयास किया जा रहा था। वस्तुत: उन्नीसवीं शताब्दी का पुनरुत्थान वादी नव जागरण काल राष्ट्रीय काव्य के विकास की दृष्टि से सर्वाधिक उपयुक्त वातावरण प्रदान करने में समर्थ रहा है। आधुनिक हिन्दी काव्य की सुदीर्घ विकास-यात्रा का इस दृष्टि से अध्ययन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि स्वतंत्रता पूर्व और पश्चात का अधिकांश काव्य प्राय: राष्ट्रीय चेतना का किसी न किसी रूप में संवाहक रहा है। आधुनिक हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय जागरण की उक्त विकास यात्रा का प्रथम सोपान - भारतेन्दु युग है, जिस पर सर्वप्रथम विचार किया जा रहा है।

(क) भारतेन्दु युगीन राष्ट्रीय जागरण और हिन्दी काव्य :

उपरिनिर्दिष्ट नव जागरण के साथ हिन्दी कविता का भारतेन्दु युग आरंभ होता है। आधुनिक हिन्दी में राष्ट्रीय प्रवृत्तियों का विकास भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के प्रादुर्भाव से होता है। 'उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक आन्दोलनों के परिणाम स्वरूप हिन्दी साहित्य में नयी चेतना आयी और काव्य के वर्ण्य-विषय व्यापक हुए। इस समय की कविता में स्वदेश, स्वधर्म और स्वभाषा के प्रति प्रेम की भावना को अभिव्यक्ति मिली।

भारतेन्दु इस नवीन आन्दोलन के अग्रणी थे और इसीलिए इस युग को भारतेन्दु युग कहते हैं ।[१]

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का हिंदी साहित्य में पदार्पण युगीन युगीन परिस्थितियों के संदर्भ में तथा तथा राष्ट्रीय काव्य धारा के प्रारंभ के दृष्टिकोण से एक अभूतपूर्व घटना है । यद्यपि दोनों घटनाएं परस्परावलंबित हैं, तथापि सच तो यह है कि भारतेन्दु से ही साहित्य में नवयुग की चेतना के दर्शन होते हैं । भारतेन्दु जी ने हिंदी साहित्य की धारा को श्रृंगारकालीन परंपराओं और रूढ़ियों के बन्धन से हटाकर राष्ट्रीयता और समाज सुधार आदि की नयी दिशा की ओर मोड़ा ।[२] कविता अब राजदरबारों की क्रीत दासी न रहकर संपूर्ण समाज के हृदय की सम्राज्ञी बनने लगी । राजाश्रय का त्याग करते ही उसे जनाश्रय का अथाह समुद्र हस्तगत हुआ । इस सन्दर्भ में डा० केशरी नारायण शुक्ल का विचार द्रष्टव्य है- 'इन लोगों के द्वारा सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह हुआ कि जीवन और साहित्य का जो सम्बंध रीतिकाल में शिथिल पड गया था, फिर से घनिष्ठ हो गया । भारतेन्दु युग की यह महत्वपूर्ण घटना है जिसका आगामी साहित्य पर व्यापक प्रभाव पड़ा । भारतेन्दु युग की कविता में देशवासियों की समस्या, उनके विचार तथा उनकी भावना की पूर्ण अभिव्यक्ति हुई कवि प्रेम के गीतों की रचना के साथ-साथ जनता की सामाजिक, राजनीतिक, तथा आर्थिक मनोदृष्टि एवं परिस्थिति की झलक दिखाने लगे ।[३] अब काव्य का सर्जन किसी राजा-रानी को प्रसन्न करने हेतु न होकर जनमानस की पीडाओं, कुण्ठाओं और अभावों के प्रति सहानुभूति प्रदर्शन के रूप में होने लगा ।

'जिनके कारण सब सुख पावैं, जिनका बोया सब जन खाँय,
हाय-हाय उनके बालक नित, भूखों के मारे चिल्लायँ ।
अहा बिचारे दुःख के मारे, निसदिन पच-पच मरे किसान,
जब अनाज उत्पन्न होय तब, सब उठवा ले जाय लगान ।[४]

काव्य में अब देशानुराग और राष्ट्रीय भावना के व्यापक दर्शन होने लगे। भारतेन्दु जी ने ब्रिटिश सरकार द्वारा आर्थिक शोषण का खुलकर विरोध किया -

'अंग्रेज राज सुख-साज सजै सब भारी,
पै धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी।
ताहू पर महंगी काल रोग विस्तारी
दिन- दिन दूने दु:ख देत ईस हा हारी।
सबके ऊपर टिक्कस की आफत आई,
हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।'[५]

राष्ट्रीय महत्त्व के अनेक विषयों पर इस युग के कवियों ने लेखनी उठायी। कवि-कर्म जन-सामान्य के उपेक्षित, दलित और निराश जीवन की विस्तृत झांकियां प्रस्तुत करने में प्रवृत्त दिखाई देने लगा। 'वस्तुत: आधुनिक काव्य -धारा में यथार्थवादी राष्ट्रीय दृष्टिकोण की पूजा व अर्चना हमें, सर्वप्रथम भारतेन्दु युग में ही होती दिखाई पड़ती है। भारतेन्दु युग के प्राय: प्रत्येक कवि की रचना में यथार्थ के प्रति दृढ़ आस्था और प्रगाढ़ भक्ति परिलक्षित होती है। राष्ट्रीयता का विशाल वट-वृक्ष जो आज समूचे भारत को सुखद छाया व शीतल स्नेह प्रदान कर रहा है, उसके मूल में भारतेन्दु युगीन राष्ट्रीय काव्य की अमर प्रेरणा निहित है। राष्ट्रीय भावना का वही बीज द्विवेदी युग में अंकुरित-विकसित होकर आज पुष्पित हो रहा है।[६]

इस युग के काव्य की राष्ट्रीय तथा नव जागरण की चेतना के प्रमुख पक्ष इस प्रकार हैं -

(१) जनवादी भावना, जिसे ऊपर लक्ष्य कियाजा चुका है।
(२) नारी विषयक उदात्त दृष्टिकोण।
(३) लोक काव्य-शैली का प्रयोग।
(४) यथार्थवादी दृष्टि।

रीतिकालीन काव्य में नारी पुरुष की अतृप्त वासना-वृत्ति की सन्तुष्टि का जहां मात्र साधन मानी जाती थी, वहां भारतेन्दु युग में नारी जाति के प्रति कवि अधिक सहानुभूति प्रदर्शित करता है। नारी को नर की अर्द्धांगिनी मानकर उसके कल्याण की कामना करता है। यथा-

'सीता अनसूया सती अरुन्धती अनुहारि ।
शील लाज विद्यादि गुण लहौं सकल जग नारि ।।
वीर प्रसविनी बुध-बधू होय हीनता खोय ।
नारि नर अरधंग की सांचे हि स्वामिन होय ।।'[७]

जिस तरह एक ओर भारतेन्दु जी ने रीतिकालीन नारी- विषयक अवधारणा को परिवर्तित करके इसे समाज में उदात्त स्थान दिलाने का यत्न किया, उसी प्रकार दूसरी ओर लोक काव्य शैली को अपनाया। भाव, भाषा, विचार, वर्ण्य- विषय, छंद इत्यादि में युगीय आवश्यकता के अनुकूल परिवर्तन करके उन्होंने काव्य को नव्यतम रूप प्रदान किया। 'भारतेन्दु इस तथ्य से भलीभांति परिचित थे कि भारत का अधिकांश जन-समुदाय ग्रामों में वास करता है। अतः उन्होंने काव्य के माध्यम से संपूर्ण देश के जागरण के हेतु काव्य शैली को सामान्य बनाने के उद्देश्य से कजरी, ठुमरी, खेमटा, लावनी, चैती, कहरवा, अद्धा, होली, सांभी, लम्बे, जाने के गीत, बिरहा, चनैनी, गजल आदि ग्रामीण छंदों को काव्य में अपनाया।'[८]

जनवादी भावना के अनुरूप उक्त काव्य शैली को अपनाने के कारण भारतेन्दु युगीन कवियों ने स्वाभाविक रूप से यथार्थवादी दृष्टिकोण विकसित किया। तत्कालीन समाज की पीड़ा, व्यथा एवं शोषण का जैसा सटीक तथा यथार्थ चित्रण इन कवियों ने किया है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। भारतेन्दु के अतिरिक्त बालमुकुन्द गुप्त, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', सत्यनारायण कविरत्न, राधाकृष्णदास,

पं० प्रतापनारायण मिश्र, अंबिकादत्त व्यास प्रभृति कवियों ने कल्पना की व्योमबिहारी उडानों को छोड़कर वास्तविक धरातल पर उतरकर जन समाज की तत्युगीन समस्याओं पर दृष्टिक्षेप किया । यद्यपि उक्त कवियों ने राष्ट्रीय जागरण के उद्देश्य से वर्तमान कालीन समस्याओं का सहृदयता पूर्ण चित्रण करते हुए राष्ट्र-भक्ति[9] प्रदर्शित की तथापि कांग्रेस की प्रारंभिक नीति का परिपालन करते हुए उन्होंने राजभक्ति[10] दिखाते हुए आवश्यक सुधार के लिए प्रार्थना की नीति का अनुगमन किया ।

उपर्युक्त विवेचन से प्रकट है कि भारतेन्दुकालीन राष्ट्रीय काव्य नवजागरण का द्योतक है । इसमें देश की समकालीन हीन और दुर्दशाग्रस्त परिस्थिति के प्रति गहरी संवेदना है । भारतेन्दुयुगीन प्राय: सभी कवियों ने यद्यपि प्रारंभ में राजभक्ति प्रदर्शित की तथापि शनै: शनै: वह राष्ट्र-भक्ति के रूप में परिणत होने लगी । देश के दैन्य, दारिद्र्य तथा नैराश्य के यथार्थवादी चित्रों को उभारते हुए उन्होंने सुधारवादी दृष्टि-कोण अपनाया । पूर्ववर्ती अध्याय में विवेचित जागरण के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि युग गत राष्ट्रीय जागरण का आकलन इस युग की कविता में पर्याप्त मात्रा में हुआ है ।

(ख) द्विवेदी युगीन राष्ट्रीय काव्यधारा :

भारतेन्दु युगीन राजभक्ति एवं प्रार्थनावादी नीति बंग-भंग जैसी अंग्रेजों की कठोर दमननीति के परिणाम स्वरूप समाप्त हो गई और वह स्वदेशी आंदोलन के द्वारा विरोध एवं प्रतिकार के रूप में परिणत हो गई । स्वयं कांग्रेस भी `उग्रदल` एवं `नरमदल` की दो भिन्न विचारधारा में विभक्त हो गई । हिन्दी साहित्य पर इस नवीन विचारधारा का गहरा प्रभाव पडा । बीसवीं शताब्दी के आगमन के साथ ही युग-प्रवर्तक आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने `सरस्वती` का सम्पादकत्व ग्रहण

किया । सन् १६०३ से १६२० ई० तक के सत्रह वर्षीय संपादन काल में द्विवेदी जी ने सत्यनारायण कविरत्न की 'वन्दे मातरम्', 'करुणा-क्रन्दन' तथा मैथिलीशरण गुप्त जी की 'भारत वर्ष' आदि शीर्षक कविताएं प्रकाशित कर समग्र युग पर राष्ट्रीयता की अमिट छाप अंकित कर दी । लोकमान्य तिलक तथा उनके सहयोगियों की उग्र विचारधारा के परिणाम स्वरूप देश में व्यापक क्रांति का वातावरण उत्पन्न होने लगा । फलत: भारतवासियों में यह भावना उद्वेलित होने लगी कि 'भारत भूमि' हमारी है और इसके ऊपर विदेशी शासन अनुचित है । इसे चुनौती समझकर यदि अंग्रेजों का निष्कासन न किया जाय तो यह राष्ट्र की मीरुता ही समझी जाएगी ।

द्विवेदी युगीन काव्य की राष्ट्रीय एवं नवजागरण की चेतना के प्रमुख पक्ष इस प्रकार हैं :-

१) राष्ट्र के प्रति ममत्व का भाव ।
२) व्यापक राष्ट्रीयता की चेतना ।
३) भारतीय अतीत का गौरव गान ।
४) वर्तमान दुरवस्था के प्रति क्षोभ एवं सुधारवादी दृष्टिकोण ।

१-राष्ट्र के प्रति ममत्व का भाव :

यह सत्य है कि अनुराग एवं ममत्व के बिना त्याग की भावना उद्बुद्ध नहीं हो सकती । द्विवेदी युगीन कवियों ने एक ओर राष्ट्रीय भावना को उजागर करने का भारतेन्दुयुगीन यत्न जारी रखा तो दूसरी ओर मां भारती के रागात्मक चित्रों को उभारते हुए उसके प्रति ममत्व का भाव प्रकट करने का यत्न किया है । इस संदर्भ में श्री सत्यनारायण कविरत्न की 'वंदेमातरम्' तथा 'करुणा-क्रन्दन', 'गयाप्रसाद शुक्ल सनेही' की 'करुणा कादम्बिनी', श्रीधर पाठक की 'भारत गीत' तथा मनोविनोद', रामनरेश त्रिपाठी की 'मिलन' तथा 'पथिक' प्रभृति कवियों की कृतियों

में माँ भारती के रागात्मक चित्रों को अंकित किया गया है। राष्ट्रीयता के लिए मातृभूमि-प्रेम या उससे रागात्मक परम अनिवार्य तत्व है जिसके अभाव में राष्ट्रीयता कोरी विडम्बना समझी जाएगी। तदर्थ राष्ट्रीय काव्यधारा में इसका व्यापक महत्त्व स्वीकार किया गया है। यथा-

'बन्दहु मातृभारत -धरनि।
श्वेत हिमगिरि सुपथ सुरसरि तेज तपमय तरनि।
सरित बन कृषि भरित भुव छबि सरस कवि-मन हरनि।'[११]

और 'पृथ्वी पर कोई देश भी इसके नहीं समान है।
इस दिव्य देश में जन्म का हमें बहुत अभिमान है।'[१२]

तथा 'भूलोक का गौरव, प्रकृति का पुण्य लीला-स्थल कहाँ?
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगाजल जहाँ।
संपूर्ण देशों से अधिक किस देश का उत्कर्ष है?
उसका कि जो ऋषिभूमि है, वह कौन? भारतवर्ष है।'[१३]

डा० इकबाल भी 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा' कहकर देशानुराग और उसकी विश्व में सर्वोपरिता सिद्ध करने का यत्न करते हैं। आधुनिक हिन्दी की राष्ट्रीय काव्यधारा के परवर्ती कवियों ने भी माँ भारती की श्रेष्ठता एवं उसके रागात्मक चित्र अंकित किये हैं। अर्थात् प्रसाद, निराला, पंत जैसे छायावादी कवियों तथा राष्ट्रीय काव्यधारा के माखनलाल चतुर्वेदी, सियाराम शरण गुप्त, गोपालशरण सिंह, पंडित सोहनलाल द्विवेदी प्रभृति कवियों ने माँ- भारती के अनेक चित्र अंकित किये हैं।

२- व्यापक राष्ट्रीयता की चेतना :

द्विवेदी युगीन राष्ट्रीय कविता अनुसरण की अपेक्षा भारतीय क्षितिज का

व्यापक नेतृत्व स्वीकार करती है। वस्तुतः भारतेन्दुकालीन काव्य में राष्ट्रीयता के जिस स्वरूप का उदय हो रहा था उसका बहुमुखी विकास द्विवेदी युगीन राष्ट्रीय काव्य में परिलक्षित होता है। भारतेन्दुकालीन कवि ने एक ओर जहां देश की वर्तमान दुर्दशा पर आंसू बहाते हुए देश की हीनावस्था का चित्रण बड़े व्यापक धरातल पर किया, वहां दूसरी ओर द्विवेदी युगीन कवियों ने राष्ट्रीयता के आदर्श की संप्राप्ति के निमित्त देश को संगठन, शक्ति, उत्साह तथा प्रेरणा प्रदान करके मातृभूमि के प्रति सच्ची राष्ट्रभक्ति का परिचय दिया है। राष्ट्रीय भावना के उन्नयन के लिए जन-संगठन और एकता पर कवियों ने अधिक बल दिया। राष्ट्र की नाना जातियों से सांप्रदायिक विद्वेष भूलकर परस्पर भ्रातृभाव की भावना का स्फुरण कराने के निमित्त कविवर रूपनारायण पांडेय लिखते हैं,

'जैन बौद्ध पारसी यहूदी मुसलमान सिख ईसाई।
कोटि कंठ से मिलकर कह दो हम सब हैं भाई-भाई।।'[१४]

गिरिधर शर्मा जैसे कवि भी विभिन्न प्रदेश निवासी लोगों को प्रांतों की संकीर्णता भूलकर सबको भारतवासी ही समझने की उद्घोषणा करते हैं -

पंजाबी गुजरात निवासी, बंगाली हो या ब्रजवासी।
राजस्थानी या मद्रासी, सबके सब हम भारतवासी।'[१५]

राष्ट्रीय ऐक्य स्थापित करने के उद्देश्य से राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त लिखते हैं -

'है ज्ञात क्या तुमको नहीं, तुम लोग तीस करोड़ हो,
यदि ऐक्य हो तो फिर तुम्हारा कौन जग में जोड़ हो ?

\+ + +

सब बैर और विरोध का बल बोध से वारण करो,
है भिन्नता में खिन्नता ही, एकता धारण करो।'[१६]

दीन-दुखी बन्धुओं के प्रति वात्सल्य भाव रखते हुए व्यापक राष्ट्रीयता की चेतना का स्फुरण वे इस प्रकार करते हैं :-

'लाखों हमारे दीन दुखी बन्धु भूखों मर रहे
पर हम व्यसन में डूबकर कितना अपव्यय कर रहे ।
क्या देश वत्सलता यही है ? क्या यही सत्कार्य है ?
क्या लक्ष्य जीवन का यही है ? क्या यही औदार्य है ?'[१७]

इस तरह नाना जातियों को जातिभेद, प्रान्त भेद आदि की विस्मृति एवं विच्छिन्न राष्ट्रीय शक्तियों को एकत्रित करने के उद्देश्य से द्विवेदी युगीन कवियों ने व्यापक राष्ट्रीय चेतना का उदय करने का यत्न किया ।

३- भारतीय अतीत का गौरव गान :

सांस्कृतिक पुनर्जागरण के सन्दर्भ में पूर्ववर्ती पृष्ठों में यह परिलक्षित किया गया है कि किस तरह उन सूत्रधारों ने भारतीय जन समाज को प्रमादपूर्ण निद्रा में से जागृत करने का यत्न किया जिसका युगगत आकलन भारतेन्दुकालीन कवियों की कविता में पर्याप्त मात्रा में दृष्टिगत होता है । जिस तरह राष्ट्रीयता के भावात्मक उद्रेक के लिए मातृभूमि के प्रति रागात्मक सम्बंध अनिवार्य समझा गया है, उसी तरह त्याग, प्रेम व बलिदानी भावना से परिपुष्ट अतीत भारत की संस्कृति एवं इतिहास उज्ज्वल प्रसंगों का गौरव - गान करते हुए अपने देश एवं उसकी संस्कृति के प्रति राग व त्यागमूलक भावना जागृत करना भी आवश्यक है । इसके अभाव में न हमें उज्ज्वल अतीत की परंपरा का ज्ञान होता है, न उसके प्रति त्यागमूलक भावना जागृत होती है । द्विवेदी युगीन प्राय: सभी कवियों ने अतीत का गौरव गान करने के उद्देश्य से पौराणिक कथाओं एवं प्राचीन तथा मध्यकालीन इतिहास के घटना-प्रसंगों के उत्प्रेरक चित्रों को अंकित करने का सफल यत्न किया है । ऐसा करते हुए उन्होंने भारतीय

जन-समाज में साहस, त्याग एवं वीरता से परिपूर्ण चेतना के नवजागरण का प्रयास किया है। भारत के गौरवमय अतीत के आधार पर देश की भव्य सभ्यता की स्मृति दिलाते हुए कवि रूपनारायण पांडेय तत्युगीन ब्राह्मण से संबोधित करते हुए कहते हैं -

'ब्रह्मदेव फिर उठो देश का हित करने को।
रोग शोक दारिद्रय दुख दुर्गति हरने को ।।
देखे सारा विश्व फिर क्या है सच्ची सभ्यता।
पराकाष्ठा धर्म की और भाव की भव्यता ।।' १८

अतीत भारत की महासतियों की त्यागमयी विश्वविश्रुत कथाओं की उत्प्रेरक स्मृति दिलाते हुए ठाकुर गोपालशरण सिंह तत्युगीन असहाय नारियों की स्थिति का संकेत करते हुए कहते हैं :-

'दमयन्ती की यही जन्म-वसुधा है प्यारी।
हुईं रुक्मिनी यहीं और गार्गी गांधारी ।।
जनकसुता की कथा विश्वविश्रुत है न्यारी।
और कहाँ हुईं हैं जगत में ऐसी नारी।
आज अविद्या मूर्ति सी हैं सब श्रीमतियाँ यहाँ।
दृष्टि अभागी देख ले उनकी दुर्गतियाँ यहाँ ।।' १९

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त तो द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि हैं। उनकी भारत-भारती तो अतीत के अनेक प्रेरणामय प्रसंगों की निधि है। प्रस्तुत रचना का संकल्पपूर्ण उद्देश्य कवि की इन पंक्तियों में भलीभाँति स्पष्ट है -

हम कौन थे, क्या हो गये हैं और क्या होंगे अभी।
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी ।।' २०

और- 'थे भीम-तुल्य महाबली, अर्जुन समान महारथी ,
श्रीकृष्ण लीलामय हुए थे आप जिनके सारथी ।
उपदेश गीता का हमारा युद्ध का ही गीत है,
जीवन समर में भी जनों को जो दिलाता जीत है ।।'[२१]

४-वर्तमान दुरवस्था के प्रति क्षोभ एवं सुधारवादी दृष्टिकोण :

द्विवेदी युगीन कवियों ने न केवल अतीतकालीन गौरवमय चित्रों को ही अंकित किया अपितु वर्तमान की शोचनीय दुर्दशा के प्रति क्षोभ-प्रदर्शन करते हुए समाज सुधार की भी प्रवृत्ति अपनायी । यथार्थवादी प्रवृत्ति के समर्थक होने के कारण ये कवि जन समाज का सजीव चित्र प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं । समाज के उपेक्षित, निर्धन, पददलित और कर्मठ व्यक्तियों के चित्र इन्होंने अधिक उभारे हैं । किसान और मजदूरों की मात्र चर्चा ही नहीं की गई अपितु उनके कष्टपूर्ण जीवन के प्रति सहानुभूति भी प्रकट की है । इनका दृढ़ मंतव्य है कि बिना समाज सुधार के राष्ट्रीयता की कल्पना नहीं की जा सकती । इस युग का कवि समकालीन सामाजिक दुरवस्था एवं अधोगति के प्रति चिंतित रहता है और भारत के गौरवशाली अतीत के आधार पर संपूर्ण राष्ट्र को सामाजिक सुधार के लिए उत्प्रेरित करता है । कृषक जीवन के कष्टों के प्रति सहानुभूति प्रकट करते हुए मैथिलीशरण गुप्त लिखते हैं -

'पाया हमने प्रभो कौन सा त्रास नहीं है ।
क्या अब भी परिपूर्ण हमारा ह्रास नहीं है ।
मिला हमें क्या यहीं नरक का वास नहीं है ।
विष खाने को हाय टका भी पास नहीं है ।।
कृषक निन्दक मर जाय अभी यदि हो जीता ।
पर यह गौरव समय कभी का है अबीता ।।'[२२]

और- 'वीरो ! उठो, अब तो कुयश की कालिमा को मेट दो,
निज देश को जीवन सहित तन, मन तथा धन भेंट दो ।
वैश्यो ! सुनो व्यापार सारा मिट चुका है देश का,
सब धन विदेशी हर रहे हैं, पार है क्या क्लेश का ?' २३

भारतीय समाज-सुधारक की आवश्यकता को इंगित करते हुए हरिऔध जी कहते हैं -

'जिसे पराई रहन-सहन की लौ न लगी हो ।
जिसकी मति सब दिन निजता की रही सगी हो ।।
हमें चाहिए परम सुजान सुधारक ऐसा ।
जिसकी रुचि जातीय रंग के बीच रंगी हो ।।' २४

वर्तमान कालीन ताप क्लेशमय दुर्दशा से विचलित कवि-मानस की उक्ति दृष्टव्य है -

'क्षत्रिय ! सुनो अब तो कुयश की कालिमा को मेट दो ।
निज देश को जीवन-सहित तन-मन तथा धन भेंट दो ।
वैश्यो ! सुनो व्यापार सारा मिट चुका है देश का ।
सब धन विदेशी हर रहे हैं, पार है क्या क्लेश का ।' २५

श्रीधर पाठक जी बाल विधवाओं की सामाजिक करुणाजन्य स्थिति का निर्देश करते हुए कहते हैं -

'दु:खी बालविधवाओं की जो है गती,
कौन सकै बतला किसी इतनी मती ।
जिन्हें जगत की सब बातों से ज्ञान है
दु:ख सुख मरना जीवन एक समान हैं । २६

अत: पूर्ववर्ती विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि द्विवेदी युगीन राष्ट्रीय भावना भारतेन्दुयुगीन राष्ट्रीयय भावना का एक विस्तृत एवं व्यापक स्वरूप है। यदि भारतेन्दु युग राष्ट्रीय काव्यधारा का उषाकाल था तो द्विवेदी युग में सूर्य की बढ़ती तेजस्विता का दर्शन होता है। भारतेन्दु युग राष्ट्रीय काव्यधारा का बीजवपन काल था तो द्विवेदी युग में यही बीज अंकुरित होकर विकसमान होता परिलक्षित होता है। भारतेन्दु काल नवजागरण काल था तो द्विवेदी काल विभिन्न जातियों और उनकी शक्तियों का संगठन काल था। इसके साथ ही यह उल्लेखनीय है कि हिन्दी कविता में राष्ट्रीय चेतना के उपरिनिर्दिष्ट पक्ष परवर्ती युग में भी अभिव्यक्ति का माध्यम पाते रहे, जिन पर यथास्थान आगे विचार किया जायेगा।

(ग) छायावाद युग :

द्विवेदी युग के समापन के साथ ही काव्य में छायावादी प्रवृत्तियों का महत्व बढ़ने लगा। छायावाद युग के प्रारंभ के संदर्भ में विद्वानों में मतवैभिन्य होते हुए भी अधिकांश विद्वान उसका प्रारंभ १९२० ई० के आसपास मानते हैं और उसका समापन काल प्राय: १९३५-३६ के आसपास। छायावाद के नामाभिधान तथा उसके काव्यगत स्वरूप-निर्धारण के संदर्भ में भी विद्वानों में मतैक्य दृष्टिगत नहीं होता। कतिपय विद्वान उसे अभिव्यंजना की एक विशेष प्रणाली मानते हुए एक कलागत आंदोलन ही मानते हैं। छायावाद शब्द को रोमाण्टिसिज्म का हिन्दी अनुवाद मानते हुए उसे योरपीय रोमाण्टिक कविता का अन्धानुकरण भी समझा गया है। 'किन्तु वह तो भारतीय संस्कृति से अनुप्राणित, भारतीय परिस्थितियों से अनुप्रेरित और प्रथम महायुद्ध के बाद के नवीन मानवतावादी आदर्शवाद पर आधारित हिन्दी की मौलिक काव्यधारा है।'[२७] जो हो, उक्त मतवैभिन्नय के होते हुए भी इस तथ्य को सभी स्वीकार करते हैं कि छायावादी काव्य में प्रेम और सौंदर्य की बाह्याभ्यंतर सूक्ष्म चेतना की विविधरंगी अभिव्यंजना हुई है। प्रेम और सौंदर्य के जितने भावोच्छ्वास छायावादी काव्य में अपनी सूक्ष्मता एवं भव्यता के साथ अभिव्यंजित हुए उतने अन्यत्र दुर्लभ हैं।

प्रेम और संघर्ष सौंदर्य के चित्रों के अतिरिक्त इन कवियों ने जैसा कि उक्त उद्धरण में निर्दिष्ट किया गया है, भारतीय संस्कृति से अनुप्राणित एवं समसामयिक भारतीय गतिविधियों से अनुप्रेरित अनेक चित्र अंकित किये हैं। व्यक्तिवाद के संपोषक होते हुए भी ये कवि स्वातंत्र्य-प्राप्ति के आंदोलन से निर्मित स्थितियों से ही पूर्णतया असम्पृक्त न रह सके। अर्थात् उन्होंने राष्ट्रीयता की व्यापक चेतना के प्रसार में यथोचित योगदान दिया। इस दृष्टिकोण से छायावाद के प्रमुख कवि प्रसाद, निराला, पंत, महादेवी वर्मा प्रभृति कवियों के काव्य का अनुशीलन करने पर उनके काव्य को तीन प्रमुख पक्षों में विभाजित किया जा सकता है। यथा -

१- अतीत के प्रति गौरवगान।
२- मातृभूमि के प्रति रागात्मक भाव।
३- समसामयिक राष्ट्रीय चेतना।

१- अतीत के प्रति गौरव गान :

द्विवेदी युगीन राष्ट्रीय काव्यधारा के विवेचन के अंतर्गत यह दृष्टिगत किया गया है कि तत्युगीन कवियों ने भारतीय उज्ज्वल अतीत के गौरवमय पौराणिक व ऐतिहासिक घटना-प्रसंगों का उद्घाटन कर राष्ट्रीय चेतना की जागृति में किस तरह प्रेरणामूलक यत्न किया था। छायावादी युग में भी यह प्रवृत्ति भलीभांति दृष्टिगत होती है। प्रसाद, निराला, पंत आदि कवियों ने भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल चित्रों को उभारते हुए अतीत का गौरव गान किया है। फलत: स्वातंत्र्य-प्राप्ति के लिए कटिबद्ध जनमानस का एक ओर संस्कृति के प्रति प्रेम और आकर्षण में वृद्धि हुई है तो दूसरी ओर भारत-राष्ट्र के प्रति अपनत्व का भाव भी उजागर हुआ है।

स्कन्दगुप्त नाटक में प्रसाद जी ने प्रसंगवश भारतीय उज्ज्वल अतीत का मोहन एवं संप्रेरक चित्र उभारते हुए लिखा है,

'हिमालय के आंगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार ।
उषा ने हंस अभिनंदन किया और पहनाया हीरक हार ।
जगे हम, लगे जगाने विश्व लोक में फैला फिर आलोक ।
व्योम-तम-पुंज हुआ तब नष्ट, अखिल संसृति हो उठी अशोक ।

\+ \+ \+

चरित थे पूत, भुजा में शक्ति, नम्रता रही सदा सम्पन्न ।
हृदय के गौरव में था गर्व, किसी को देख न सके विपन्न ।
हमारे संचय में था दान, अतिथि थे सदा हमारे देव ।
वचन में सत्य, हृदय में तेज, प्रतिज्ञा में रहती थी टेव ।'[२८]

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' भी भारतीय संस्कृति के उपासक रहे हैं । 'राम की शक्ति पूजा', 'तुलसीदास' आदि प्रबंध काव्य भारतीय संस्कृति की उपासनामूलक महिमा का गान है । इसके अतिरिक्त उनके कतिपय स्फुट काव्यों में भी भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल चित्र परिलक्षित होते हैं । कवि जन-मानस में राष्ट्रीय जागरण की प्रेरणा प्रदान करने के लिये 'जागो फिर एक बार' काव्य में उसकी महानता की याद दिलाते हुए कहते हैं-

तुम हो महान्, तुम सदा हो महान् ,
है नश्वर यह दीन भाव,
कायरता, कामपरता,
ब्रह्म हो तुम,
पद-रज भर भी है नहीं पूरा यह विश्व-भार•जागो फिर एक बार ।'[२९]

कवि श्री सुमित्रानंदन पंत भी भारतीय प्रकृति के साथ-साथ संस्कृति के संरक्षक एवं संपोषक रहे हैं । उनका अभिमत है कि भारत का वास्तविक नूतन निर्माण भारतीय संस्कृति के नैतिक धरातल पर ही किया जा सकता है । मानवता की उद्घोषक भारतीय संस्कृति की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए वे कहते हैं -

'राजनीति का प्रश्न नहीं रे आज जगत के सम्मुख
अर्थ-साम्य भी मिटा न सकता मानव जीवन के दुख ।
आज बृहत् सांस्कृतिक समस्या जग के निकट उपस्थित ।
खंड मनुजता को युग युग की होता है नव-निर्मित,
विविध जाति, वर्गों, धर्मों को होना सहज समन्वित,
मध्य युगों की नैतिकता को मानवता में विकसित ।'[30]

इस प्रकार हम देखते हैं कि छायावादी प्रमुख कवियों ने भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल अतीत का गौरव-गान करते हुए जन-मानस को उत्प्रेरित किया है । साथ ही संस्कृति प्रेम के भावों को उजागर करते हुए राष्ट्रीय जागरण को गति प्रदान की है ।

२-मातृभूमि के प्रति रागात्मक भाव :

यह प्रवृत्ति भी द्विवेदीयुगीन कवियों में परिलक्षित की जा चुकी है । राष्ट्रीय जागरण एवं व्यापक राष्ट्रीय चेतना के समुचित विकास के लिये ये तत्व परम आवश्यक समझे गये हैं । मानव का किसी चीज-वस्तु, पदार्थ या व्यक्ति के प्रति एक बार रागात्मक सम्बंध स्थापित हो जाता है, तब वह उसकी प्राप्ति एवं सुरक्षा के हित कल्पनातीत त्याग करने को भी उद्यत हो जाता है । राष्ट्रीय-धारा के कवियों के उपरांत छायावादी कवियों ने भी मातृभूमि के रागात्मक चित्र अंकित कर राष्ट्र-प्रेम एवं बलिदानी भावना को उजागर किया है ।

कविवर प्रसाद ने प्रसिद्ध नाटक 'चन्द्रगुप्त' के द्वितीय अंक के प्रारंभ में भारत की मनोरम प्रकृति की शोभा का वर्णन करते हुए भारत के स्निग्ध एवं मधुमय चित्र अंकित किया है । यथा -

'अरुण यह मधुमय देश हमारा ।
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा ।
सरस तामरस गर्भ विभा पर- नाच रही तरु शिखा मनोहर ।
छिटका जीवन हरियाली पर- मंगल कुंकुम सारा ।
बरसाती आँखों के बादल- बनते जहाँ भरे करुणा जल ।
लहरें टकरातीं अनन्त की- पाकर जहाँ किनारा ।
हेम कुम्भ ले उषा सबेरे- भरती ढुलकाती सुख मेरे ।
मदिर ऊंघते रहते जब- जग कर रजनी भर तारा ।'[31]

'स्कंदगुप्त' के उक्त गीत की ये पंक्तियां भी इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं -

'जियें तो सदा उसी के लिए, यही अभिमान रहे, यह हर्ष ।
निछावर कर दें हम सर्वस्व, हमारा प्यारा भारत वर्ष ।।'[32]

महाप्राण निराला ने भी माँ भारती के रागात्मक बिसंगत चित्र उभारते हुए उसके प्रति ममत्व का भाव व्यंजित किया है । उनका प्रसिद्ध गीत 'भारति, जय विजय करे' सर्वांगपूर्ण चित्र उपस्थित करता है । यथा-

'भारति, जय, विजय करे ।
कनक-शस्य-कमल धरे ।
　　　　लंका पदतल शतदल,
　　　　गर्जितोर्मि सागर- जल
　　　　धोता शुचि चरण-युगल
　　　　स्तव कर बहु अर्थ- भरे ।
तरु-तृण- वन-लता बसन,
अंचल में खचित सुमन,
गंगा ज्योतिर्जल-कण
धवल धार हार गले ।

मुकुट शुभ्र हिम-तुषार,
प्राण प्रणव ओंकार,
ध्वनित दिशाएँ उदार,
शतमुख शतरव-मुखरे ।[33]

बलिदानी भावना को लेकर माँ के दुखों को दूर करने के लिए मृत्यु का सहर्ष वरण भी करना कवि चाहते हैं । माँ की इच्छा एवं आज्ञा ही उनके लिए सर्वस्व है । वे कहते हैं -

'दे, मैं करूं वरण
जननि, दुखहरण पद-राग-रंजित मरण ।
भीरूता के बंधे पाश सब छिन्न हों,
मार्ग के रोध विश्वास से भिन्न हों,
आज्ञा, जननि, दिवस-निशि करूं अनुसरण ।[34]

इसी भावना को अभिव्यंजित करनेवाली निराला जी की 'मातृ वन्दना' नामक कविता की ये पंक्तियां द्रष्टव्य हैं -

'नर -जीवन के स्वार्थ सफल
बलि हों तेरे चरणों पर मां
मेरे श्रम-सिंचित सब फल ।
जीवन के रथ पर चढ़कर
सदा मृत्यु-पथ पर बढ़कर,
महाकाल के भी खर शर सह
सकूं, मुझे तू कर दृढ़तर ।
जागे मेरे उर में तेरी
मूर्ति अश्रु-जल-धौत विमल,

कल से पाकर बल बलिकर दूं
जननि, जन्म-श्रम-संचित फल ।'[३५]

देश की पराधीन अवस्था से अत्यन्त व्याकुल एवं जुब्ध मन कवि निराला माँ को बन्धन मुक्त करने की तीव्र आकांक्षा लिए स्वयं आत्म विसर्जन करने को उद्यत दिखाई देते हैं -

'क्लेदयुक्त अपना तन दूँगा, मुक्त करूँगा तुझे अटल,
तेरे चरणों पर देकर बलि सकल श्रेय-श्रम-सिंचित फल ।'[३६]

इस तरह छायावादी इतर कवियों में भी यह प्रवृत्ति परिलक्षित की जा सकती है ।

३- समसामयिक राष्ट्रीय चेतना :

छायावाद युग स्वातंत्र्य-प्राप्ति की अदम्य उत्कंठा एवं आतुरता का संघर्षकालीन युग है । तदर्थ समय-समय पर परिवर्तित युगीन परिस्थितियों का आकलन प्रस्तुत युग में होना सहज-संभाव्य है । छायावादी कवियों ने परिवर्तित परिस्थितियों एवं सामसामयिक गांधीवादी चेतना को भी चित्रित कर व्यापक राष्ट्रीय चेतना के विकास में यथोचित योगदान दिया है ।

हिमालय के सर्वोच्च शिखर से स्वतंत्रता की गर्जना करनेवाले कवि प्रसाद को मातृभूमि के सपूतों पर गर्व है । संकल्पशील युवकों को निर्भीक मन से निरन्तर आगे ही बढ़ने के लिए उपदिष्ट करते हुए वे कहते हैं -

'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती,
स्वयं प्रभात समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती ।
अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़-प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो बढ़े चलो ।

असंख्य कीर्ति रश्मियाँ, विकीर्ण दिव्य दाह-सी,
सपूत मातृभूमि के रुको न शूर साहसी ।
अराति सैन्य-सिंधु में, सुवा बाग्नि-से जलो,
प्रवीर हो जयी बनो, बढ़े चलो बढ़े चलो ।`[37]

निराला जी ने अत्यन्त जागरूकता के साथ अपने युग की प्राय: समस्त समसामयिक विषमताओं एवं विपन्नताओं से परिपूर्ण रूढ़िवादिता में आमूल परिवर्तन करने की प्रबल आकांक्षा से सदैव नूतनता का आह्वान किया है । आजीवन संघर्षरत कवि स्वस्थ राष्ट्रीयता के पुनर्निर्माण में बहुमूल्य योगदान देता है । उनके काव्य में जो ओजस्विता, जागरूकता एवं क्रान्तदर्शिता दृष्टिगत होती है, वह अन्य छायावादी कवियों में दुर्लभ है । `जागो फिर एक बार` कविता नूतन शैली में जागरण का शंखनाद करती हुई वीर सपूतों की रक्तवाहिनियों में विद्युत तरंगों-सी उत्तेजना भर देनेवाली सिद्ध हुई है । कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं -

`किसी ने सुनाया यह
वीर-जनमोहन, अति
दुर्जय संग्राम- राग,
फाग का खेला रण
बारहों महीनों में
शेरों की माँद में
आया है आज स्यार ।`----जागो,[38]

उनके `खंडहर के प्रति` काव्य में भी प्रकारान्तर से यही भाव व्यंजित हुआ है । `परिमल` में ही प्रकाशित उनकी कतिपय प्रगतिवादी रचनाओं में भी राष्ट्रीयता की चेतना अभिव्यक्त हुई है । उनकी प्रसिद्ध रचनाएं `विधवा`, `भिक्षुक` `कृषक`(बादलराग के अंतर्गत) आदि युगों से पीड़ित एवं शोषित वर्ग का हृदय-विदारक चित्र उपस्थित करती हैं । `कृषक` की कतिपय पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं -

जीर्ण बाहु , है शीर्ण शरीर,
तुझे बुलाता कृषक अधीर,
हे विप्लव के वीर ।
चूस लिया है उसका सार,
हाड़-मात्र ही हैं आधार
ऐ जीवन के पारावार ।'[३९]

सुमित्रानंदन पंत भी प्रसिद्ध छायावादी आधारस्तंभों में से एक हैं । सौंदर्य एवं माधुर्य से विशिष्ट आकर्षण रखनेवाले प्रकृति के महान चितेरे कवि भारतीय संस्कृति के अतिरिक्त समसामयिक परिस्थितियों से प्रभावित हुए हैं । रूढ़िवादिता एवं पुरातन जीर्ण-शीर्ण परंपराओं का उन्मूलन करने के भावावेश में उनकी विद्रोहात्मक पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :-

'गा, कोकिल, बरसा पावक कण
नष्ट भ्रष्ट हो जीर्ण पुरातन,
ध्वंस भ्रंस जग के जड़ बन्धन ।
पावक-पग धर आवे नूतन ।
हो पल्लवित नवल मानवपन ।'[४०]

'द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र' काव्य में भी यही भाव दृष्टिगत होता है । मृत्यु का अपार्थिव पूजन करने की परंपरा का विरोध करते हुए 'ताज' कविता में समसामयिक परिवेश का उद्घाटन करते हुए वे कहते हैं -

'हाय ! मृत्यु का ऐसा अमर, अपार्थिव पूजन ?
जब विषण्ण , निर्जीव पड़ा हो जग का जीवन ।
स्फटिक सौध में हो श्रृंगार मरण का शोभन,
नग्न क्षुधातुर, वासविहीन रहें जीवित जन ?
प्रेम-अर्चना यही, करें हम मरण को वरण ?
स्थापित कर कंकाल, भरें जीवन का प्रांगण ?

शव को दें हम रूप, रंग, आदर का मानव का ?
मानव को हम कुत्सित चित्र बनादें शव का ?'[४१]

पंत जी के कवि-व्यक्तित्व पर गांधीवाद का भी प्रभुत्व परिलक्षित होता है। गांधीवादी दर्शन से प्रभावित कवि की दृढ़ मान्यता है कि गांधी निर्दिष्ट प्रेम और अहिंसा के द्वारा ही सामाजिक एवं राजनीतिक हिंसात्मक परिस्थितियों परिवर्तन लाया जा सकता है । इस दिशा में गांधी के योगदान पर विचार करते हुए `बापू के प्रति` शीर्षक कविता में वे लिखते हैं -

`जड़ता हिंसा स्पर्धा में भर
चेतना, अहिंसा, नम्र ओज,
पशुता का पंकज बना दिया ।
तुमने मानवता का सरोज !
पशुबल की कारा से जग को
दिखलाई आत्मा की विमुक्ति,
विद्वेष घृणा से लड़ने को
सिखलाई दुर्जय प्रेम-युक्ति ।'[४२]

इसी कविता में खद्दर के अभियान के द्वारा गांधी जी ने जन-समाज को आत्मनिर्भर बनाते हुए आर्थिक क्रांति कैसे की उसका प्रभावात्मक चित्र अंकित करते हुए वे लिखते हैं -

`रंग रंग खद्दर के सूत्रों में
नव जीवन आशा, स्पृहा, ह्लाद
मानवी कला के सूत्रधार ।
हर लिया यंत्र कौशल प्रवाद ![४३]

साम्राज्यवादी शासन के विरुद्ध अहिंसक शक्ति के द्वारा प्रतिकार करते हुए मानव-आत्मा की मुक्ति का प्रयास गांधी जी किस तरह कर रहे थे उसे परंपरित रूपक के द्वारा कवि ने व्यक्त करने का जो यत्न किया है, वह इस प्रकार है -

'साम्राज्यवाद था कंस, बंदिनी
मानवता पशु बलाक्रांत,
श्रृंखला दासता, प्रहरी बहु
निर्मम शासन पद शक्ति-भ्रांत
कारागृह में दे दिव्य जन्म
मानव आत्मा को मुक्तकान्ति,
जन शोषण की बढ़ती यमुना
तुमने की नत, पद-प्रणत, शांत ।'[४४]

वेदना और करुणा की गायिका तथा छायावाद एवं रहस्यवाद की प्रसिद्ध कवयित्री महादेवी वर्मा अपने युग की विभीषिकाओं के प्रति उपेक्षा कैसे कर सकती हैं ? युगों से जिसने विदेशी अन्यायों, अत्याचारों एवं आक्रमणों से भारत की सुरक्षा की है, उस हिमालय की प्रशस्ति गाते हुए 'हे चिर महान्' काव्य में उसकी चिर-निद्राधीन अडिग, अटल और मौन-साधना-लीन अवस्था के प्रति संकेत करती हुई कहती हैं -

'टूटी है कब तेरी समाधि
झंझा लौटे शतहार-हार
वह चला दृगों से किन्तु नीर
सुनकर जलते कण की पुकार ।'[४५]
सुख से विरक्त दुःख में समान।"

राष्ट्र के लिए मर-मिटना ही नव-निर्माण को निमंत्रित करता है । मृत्यु में ही शाश्वत जीवन का दर्शन करती हुई कवयित्री कहती हैं -

'क्षण-क्षण जीवन को जान चली,
मिटने को कर निर्माण-चली ।'[४६]

इस तरह छायावाद युगीन पूर्ववर्ती विवेचन से यह स्पष्ट है कि छायावादी प्रमुख कवि समसामयिक राष्ट्रीय चेतना एवं गांधीवादी दर्शन से प्रभावित होकर व्यापक राष्ट्रीय चेतना के विकास में यथोचित योगदान देते रहे । ऐसा करते हुए उन्होंने भारतेन्दु युग तथा द्विवेदीयुग से अस्खलित रूप से प्रवहमान राष्ट्रीय काव्यधारा को गति एवं शक्ति प्रदान की । यह प्रवृत्ति छायावादोत्तर युग अर्थात् स्वातंत्र्य-प्राप्ति तक के युग में भी परिलक्षित की जा सकती है ।

(घ) छायावादोत्तर युग :(स्वातंत्र्य प्राप्ति तक)

छायावाद के समाप्त होते-होते मार्क्सवादी विचारधारा ने भारत में एक ऐसा परिवर्तन लाने का यत्न किया जो अपने चिन्तन एवं दृष्टिकोण में मूलत: भिन्न था । अनीश्वरवादी मार्क्स ने मनुष्य की सर्वोपरिता घोषित कर दी थी । फलत: द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की प्रतिष्ठा हुई । तदर्थ साम्यवाद के आधार पर नूतन-समाज-रचना की कल्पना साकार करने की विद्रोहात्मक प्रतिक्रिया परिलक्षित होने लगी । मेरठ षडयंत्र केस के पश्चात् भारत में वर्गहीन सामाजिक व्यवस्था के प्रति आकर्षण बढ़ने लगा । प्रगतिमूलक विचारधारा की स्थापना के उद्देश्य से सन् १९३६ ई० में 'भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना हुई जिसके प्रथम अधिवेशन के सभापति प्रेमचंद जी नियुक्त हुए । शिवदानसिंह चौहान ने 'भारत में प्रगतिशील साहित्य की आवश्यकता' लेख के द्वारा 'कला जीवन के लिए' कहकर छायावाद का घोर विरोध किया । इतना ही नहीं छायावादी कवि स्वयं पंत जी ने 'आधुनिक कवि' की भूमिका

में छायावाद के स्थान पर प्रगतिवाद की आवश्यकता की मुहर लगा दी । साथ ही 'द्रुत झरो जगत -के जीर्ण पत्र' (फरवरी ३४) तथा 'गा, कोकिल, बरसा पावक कण, नष्ट-भ्रष्ट हो- जीर्ण-पुरातन' (अप्रैल ३५) शीर्षक कविताएं लिखकर युगांत की घोषणा कर दी । पन्त जी की युगवाणी (१६३६) के प्रकाशन के पूर्व यद्यपि प्रगतिवादी तत्वों से परिपूर्ण कतिपय रचनाएं प्रकाशित हो चुकी थीं किन्तु उनमें प्रगतिवादी दर्शन सुस्पष्ट नहीं था । अत: पन्त जी की उक्त रचना को प्रथम प्रगतिवादी रचना का श्रेय मिलता है ।

राष्ट्रीय काव्यधारा का जो प्रवाह निरंतर एवं अबाध गति से छायावाद युग में प्रवहमान रहा वह प्रगतिवाद युग में भी निरन्तर बहता रहा । राष्ट्रीय कवियों के अतिरिक्त प्रगतिवादी कतिपय कवियों ने भी उक्त धारा को गति प्रदान करने का यत्न किया है । इन दिनों संयोग से द्वितिय महायुद्ध प्रारंभ हो गया। फलत: राष्ट्रीयता की भावना से समस्त देश में आवेगपूर्ण उत्साह एवं तीव्रता जागृत हो उठी । विश्वयुद्ध में एक ओर रूस की विजय और दूसरी ओर हिटलर तथा मुसोलिनी की बर्बर नृशंसता ने भारतीयों में द्विधात्मक स्थिति उत्पन्न कर दी । सन् १६३६-३७ से १६४७ ई० के भीतर राजनीतिक स्तर पर ऐसी महान घटनाएं शीघ्र गति से घटित हुईं कि उनसे उदासीन होकर कोई पृथक् चिंतन न कर सका । प्रगतिवाद प्रेरित नये जीवन आदर्शों एवं लोक कल्याण के उत्साह से संप्रेरित होकर राष्ट्रीय कवियों ने (निराला, पन्त, दिनकर, सुभद्राकुमारी चौहान प्रभृति) काव्य-रचनाएं प्रस्तुत कीं । छायावादी एवं छायावादोत्तर युगीन राष्ट्रीय कवियों काव्यधारा पर अलग से परवर्ती पृष्ठों में विचार किया जाएगा । यहां हमें प्रगतिवादी कतिपय कवियों की राष्ट्रीयता विषयक कविताओं पर विचार करना है । इस संदर्भ में शिवमंगल सिंह सुमन, नागार्जुन, नरेन्द्र शर्मा, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' आदि प्रगतिवादी कवि उल्लेखनीय हैं ।

यह ध्यातव्य है कि विशुद्ध मार्क्सवादी विचारधारा के आधार पर वर्गहीन

समाज-रचना करने के उद्देश्य से यथार्थवादी काव्य-रचना करने वाले कवियों के चिन्तन में और राष्ट्रीयतावादी चेतना को उभारनेवाले यथार्थवादी प्रगतिशील कवियों के चिन्तन में कुछ अन्तर पाया जाता है । प्रथम प्रकार के प्रगतिशील कवियों ने देशकाल के दायित्व से भी बढ़कर पार्टी के नारे के रूप में यथार्थ को अपनाया है । उनके यथार्थ में सांप्रदायिक गंध है । देश के पीड़ितों और शोषितों के प्रति रागात्मक भावानुभूतिपूर्ण संवेदना उनमें उतनी नहीं जितनी साम्यवाद की प्रतिष्ठा एवं पूंजीवाद के प्रति आक्रोश है । अर्थात् उन्होंने एक विचारधारा के रूप में मार्क्सवादी सिद्धान्त को अपनाया है जबकि दूसरे प्रकार के उपर्युक्त कवियों ने शुद्ध राष्ट्रीयता के भाव से उन पीड़ितों एवं शोषकों के रागात्मक चित्र अंकित किये हैं ।

प्रगतिशील विचारधारा के उपर्युक्त कवियों के काव्य का अनुशीलन करने पर यह प्रतीत होता है कि उन्होंने अधिकतर समसामयिक परिस्थितियों से प्रभावित होकर राष्ट्रीय समाज की व्यथा, विवशता तथा आकांक्षा को अभिव्यक्ति प्रदान की है ।

समसामयिक राष्ट्रीय चेतना :

भारत-भूमि के कण-कण से उर्जा प्राप्त कवि सुमन जी राष्ट्रीय काव्य के सजग और प्रेरणाशील साधक हैं । राष्ट्र के क्रन्दनशील हृदय की कारुणिक चित्कार सुननेवाले कवि सुमन प्रगतिवादी कवियों में प्रमुख हैं । उनका प्रगतिवाद राष्ट्रीय भावनाओं के प्रस्थापन में सदैव सक्रिय रहा है । शोषितों, श्रमिकों एवं पीड़ितों की व्यथाओं से आपका कवि हृदय अनेक बार उद्वेलित होता देखा गया है । देश के नवयुवकों में निर्भिकता के साथ-साथ संकल्प-शक्ति ~~कर--प्रबन्न~~ का प्रपात करने की कवि में अद्भुत क्षमता है । युवकों को आनेवाली विपत्तियों एवं झंझावातों से जूझते हुए मार्ग निकालने की सम्यक प्रेरणा उन्होंने प्रदान की है । यथा-

आज सिंधु ने विष उगला है,
लहरों का यौवन मचला है ।
आज हृदय में और सिन्धु में साथ उठा है ज्वार,
तूफानों की ओर घुमा दो नाविक । निज पतवार ।'[४७]

मानव की चेतना जब जागृत हो जाती है तब वह आसमान के तारे तोड़ सकता है । विक्षुब्ध मानव जब जाग उठता है तब उसके साहस और शक्ति की सीमा नहीं रहती । इसी मानव शक्ति पर अदम्य विश्वास रखते हुए सुमन जी दमनकारी शोषक एवं विध्वंसक विदेशी शासकों से लोहा लेने का उत्साह भरते हुए कहते हैं -

'यह असीम निज सीमा जाने,
सागर भी तो वह पहिचाने ।
मिट्टी के पुतले मानव ने कभी न मानी हार,
तूफानों की ओर घुमा दो नाविक। निज पतवार ।

\+ + +

सागर की अपनी क्षमता है
पर माँझी भी कब थकता है ।
जब तक साँसों में स्पंदन है,
उसका हाथ नहीं रुकता है ।
इसके ही बल पर कर डालें सातों सागर पार,
तूफानों की ओर घुमा दो नाविक। निज पतवार ।'[४८]

चलना ही जीवन है और रुकना मौत । अर्थात् युग की प्रगतिशीलता के साथ कदम मिलाते हुए यदि प्रत्येक व्यक्ति कार्यशील बन जाय तो समस्यायें अवश्य हल हो सकती हैं । यह भाव व्यंजित करते हुए कवि कहते हैं, -

'गति प्रबल पैरों में भरी

फिर क्यों रहूं दर-दर खड़ा

जब आज मेरे सामने

है रास्ता इतना पड़ा

जब तक मंजिल न पा सकूं,

तब तक मुझे न विराम है,

चलना हमारा काम है ।

मैं तो फक्त यह जानता

जो मिट गया वह जी गया

जो बंद कर पलकें सहज

दो घूंट हंसकर पी गया

जिसमें सुधा मिश्रित गरल, यह साकिया का जाम है,

चलना हमारा काम है ।'[४९]

प्रगतिवादी आंदोलन के कारण जन समाज में एक क्रांति की लहर उत्पन्न हो गई है। जागृत कृषक एवं श्रमिक में प्रमाद के स्थान पर परिवर्तन का चांचल्य आ गया है । कवि 'जागरण' शीर्षक कविता में यह भाव किस तरह व्यंजित करते हैं यह दृष्टव्य है -

'यह क्रांति-क्रांति की प्रतिध्वनि से

क्यों गूँज उठी जगती सारी ?

क्या सचमुच घर-घर सुलग गई

नव-निर्माणों की चिनगारी ?

टूटी-फूटी झोंपड़ियों से

उठता यह कैसा कोलाहल ?

क्या पतित-पददलित युग-युग के

कुछ आज ही उठे हैं चंचल ?'[५०]

पीड़ितों की पीड़ा और आहों से अत्यन्त दु:खी कवि में पूंजीवादी समाज से निष्पन्न विषमता को देखकर आक्रोश भर आता है। 'बेघरबार' शीर्षक कविता में कवि ने इस भाव को इस तरह दिखाया है -

'बिक रहा पूत नारीत्व जहां चांदी के थोथे टुकड़ों में,
कर्तव्य पालता धनिक वर्ग मदिरा के जूठे चुकड़ों में।
इस ओर पड़ी खानाबदोश मेहनतकश मानव की पांतें,
फुटपाथों की चट्टानों पर जो काट रही अपनी रातें।'[५१]

रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' भी छायावादी काव्यधारा के विरुद्ध प्रबल ताज उठानेवाले कवि हैं। मार्क्सवादी चिन्तन से प्रभावित प्रगतिवादी चेतनापरक चिंतन करते हुए देश के परंपराप्रथित जीर्ण-शीर्ण जीवन मूल्यों के विरुद्ध स्वर बुलंद करते हैं। समसामयिक मानव जीवन की विभीषिकाओं एवं विवशताओं से आर्द्र कवि क्रांति और विद्रोह के गीत गाने लगता है। - स्वतंत्रता का मतवाला कवि अपने लक्ष्य-प्राप्ति के मार्ग में उपस्थित होनेवाली बाधाओं को हट जाने के लिए ललकारते हुए कहते हैं -

'बीच भंवर में पाल गिराकर ओ नैया के खेनेवाले,
देखो पानी की बुनियादें जहां पहुंच जाते मतवाले।
लहराया करते लहरों में सपने श्याम मरण के आकर,
मस्ती की तालों पर जब उफनाया करता बेसुध अन्तर।
चिर विद्रोही मस्तक जिसका बस निज आवर्तों में झुकता,
दूर निगाहों से नीचे भी अदाय जिसका पोत न सकता।'[५२]

स्वाधीनता के लिए देश की तरुणाई को उद्बुद्ध करते हुए वे निराशा एवं विवशता का त्याग करके निरंतर संघर्षरत रहने का परामर्श देते हैं। साथ ही आनेवाली

विपदाओं को हँसते हुए झेलते रहने को उपदिष्ट भी करते हैं। यथा-

'उर में आग नयन में पानी, होठों में मुसकान सदा।
हम हँसते म इठलाते चलते, इतरा-इतरा बल खा-खा।।
अपनी तरणी फेंक प्रलय की लहरों में खुल खेलें हम।
आज भाग्य के उल्कापातों को हँस-हँस का झेलें हम।।'[५३]

अंचल जी की राष्ट्रीय कविताओं का स्वर क्रांतिवादी रहा है। जन-मानस में सामाजिक विषमताओं के प्रति वे विप्लव की ज्वाला धधकाना चाहते हैं -

'कैसे फूँकूं कंठ कंठ में मैं विप्लव की भेरी
मुझमें इतनी जलन मगर कितनी परवशता मेरी
कैसे उद्वेलित कर दूँ मैं हृदय-हृदय की बाती
मेरी शक्ति आज क्यों लौ को ही पकड़ न पाती
कैसे जाने रक्त सिंधु में ज्वार युगों का सोचा
कैसे मिले हड्डियों में जो वज्र युगों से खोया
मैं जलता आया पर बोलो कैसे तुम्हें जलाऊँ
कैसे मैं जन-जन के मन में वह ज्वाला धधकाऊँ।'[५४]

नरेन्द्र शर्मा भी समसामयिक विषम परिस्थितियों के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए 'प्रभात फेरी' नामक काव्य-रचना में उदासीन एवं निर्जीव-से व्यक्तियों में आग फूंक देनेवाली उत्तेजक भावना भरने के लिए कहते हैं। यथा-

'आओ, हथकड़ियाँ तड़का दूँ, जागो रे नतशिर बन्दी।
उन निर्जीव शून्य श्वासों में
आज फूंकू- फूँक दूँ लो नवजीवन,

भर दूँ उनमें तूफानों का
अगणित भूचालों का कंपन
प्रलयवाहिनी हों, स्वतंत्र हों तेरी ये साँसें बन्दी ।[५५]

परिवर्तनशील युग की ओर संकेत करते हुए वे कहते हैं -

बदल रहे सब नियम कायदे, देखें दुनिया कब बदले ।
मानव ने नवयुग माँगा है अपने लोहू के बदले ।
बदले का बर्ताव न बदला, तुम बदले तो रोना क्या ?
युग परिवर्तन के इस युग का मूल्य चुकाना ही होगा,
उसका सच ईमान नहीं है, आज न जिसने दुख भोगा ।[५६]

मिट्टी के कण-कण में इस नवीन विचारधारा के कारण जो जागृति आ रही है उसे मर मिटकर भी सुरक्षित रखा जाय । हिम्मत से जीवन-पथ में अग्रसर होने का संकेत करते हुए शर्मा जी कहते हैं -

आज मरी मिट्टी के कण भी जाग रहे बन चिनगारी
जीवन की तो आज अग्नि की लपटों का ही गहना है,
मिटने में ही बनना है अब , सहना है सो लड़ना है,
सृजनत्व बन कर निकलेगा तत्व आज का संहारी ।
मैंने ही क्यों आज नियति के सन्मुख यों हिम्मत हारी ?[५७]

शर्मा जी गांधीवादी चेतना से भी प्रभावित हुए हैं । गांधी जी की अहिंसावादी क्रांति अत्यन्त मंगलमय एवं करुणामयी है, जो भूतकालीन क्रांतियों में निराली है, ऐसा अभिमत व्यक्त करते हुए वे लिखते हैं,

क्रांति यों जग में हुईं अब तक कई,
पर अहिंसा-क्रांति की संज्ञा नई,
शैली नई ।

साध्य साधक और साधन में न हो
व्यवधान जब
क्रान्ति तब मंगलमयी, करुणामयी ।[58]

'रक्त-चंदन' गांधी जी की पुण्य-स्मृति में लिखित उनकी प्रसिद्ध काव्य-कृति है। गांधी जी के व्यक्तित्व के युगीन प्रभाव को समझते हुए, उनके आकस्मिक निधन के पश्चात् उनकी प्रशस्ति गाते हुए वे कहते हैं -

तुम शुद्ध बुद्ध अन्तर्मन हो जनता के,
अन्तर्लोचन चिर-धावित मानवता के ।
तुम इस युग के चिदशक्ति-पिंड अपराजित
सित शीर्ष- पुष्प भारत की कीर्तिलता के ।[59]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि छायावादोत्तर युग में प्रगतिवादी कवियों ने प्रगतिवादी चिन्तन के धरातल पर शोषण से मुक्त होने के लिए सामाजिक व आर्थिक दुरवस्था के प्रति आक्रोश व्यक्त किया है । परिवर्तन और सुधारवादी दृष्टिकोण से पीड़ित जन-समाज के उत्कर्ष की चिंता की है ।

छायावादी एवं छायावादोत्तर युगीन कवियों के चिंतन पर महात्मागांधी की स्पष्ट छाप दृष्टिगोचर होती है । यह वह युग है जब गांधी जी के दिव्य व्यक्तित्व और कृतित्व की सबल संचालन शक्ति के आधार पर समग्र राष्ट्र में स्वातंत्र्य प्राप्ति की आतुरतापूर्ण तीव्रता दृष्टिगत होती है । उक्त दोनों वादों के अंतर्गत आनेवाले कवियों की गांधी प्रभाव युक्त कविताएं इस तथ्य का साक्ष्य उपस्थित करती हैं । इसके अतिरिक्त यहां यह भी उल्लेखनीय है कि १९२० से लेकर १९४७ ई० तक के दीर्घ कालखण्ड में स्वातंत्र्य-प्राप्ति की राष्ट्रव्यापी तड़पन दृष्टिगत होती है । उसमें विशुद्ध राष्ट्रवादी चेतना को लेकर काव्य-सृजन करनेवाले राष्ट्रीय कवियों ने भारतेन्दु तथा द्विवेदीयुगीन

राष्ट्रीय काव्यधारा को, छायावाद तथा प्रगतिवाद जैसे वादों की सीमाओं में आबद्ध हुए बिना स्वतंत्र रूप से निरन्तर प्रवहमान रखा, भारतीय राष्ट्रीय इतिहास में उनका नाम स्वर्ण अक्षरों से अंकित रहेगा। हमारा ~~प्रबन्ध~~ प्रतिपाद्य विषय ही राष्ट्रीय जागरण की विकासात्मक पृष्ठभूमि होने के कारण और हमारे आलोच्य कवि द्विवेदी जी भी इसी अन्तराल में गांधी जी के सिद्धान्तों का परिपालन करते हुए काव्य-सृष्टि करते हैं, तदर्थ इस युग में पड़नेवाले प्राय: प्रमुख राष्ट्रीय कवियों का अलग-अलग अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है जिससे राष्ट्रीय चेतना के क्रमिक विकास की रेखा स्पष्ट हो सके।

(३) प्रधानतया राष्ट्रीय चेतना के कवि :

पूर्ववर्ती पृष्ठों में यह ~~अनल~~ उल्लेख किया जा चुका है कि द्विवेदी युगोत्तर प्राक् ~~सन~~ स्वातंत्र्य राष्ट्रीय काव्यधारा में प्रधानतया राष्ट्रीय चेतना के कवियों में 'उग्र' एवं 'नर्म' नीतियों में माननेवाले कवि पाये जाते हैं। दोनों प्रकार के कवियों में न्यूनाधिक मात्रा में गांधीवादी जीवन दर्शन का प्रभाव परिलक्षित होता है। गांधीवादी दर्शन यद्यपि वह प्राचीन दर्शन ही था जिसमें समस्त विश्व के उत्कर्ष की भावनाएँ निहित थीं, तथापि आधुनिक युग के लिए बहुत बड़े वरदान के रूप में सिद्ध हुआ। 'बापू' ही ऐसे प्रथम राजनीतिज्ञ थे जिन्होंने सत्य और अहिंसा के माध्यम से देश को स्वतंत्र करने का प्रण किया। प्रस्तुत युग की राष्ट्र-प्रेम से अभिसिंचित कविता की व्यापक प्रेरणा के वशीभूत होकर देश का आबालवृद्ध ब्रिटिश शासकों से लोहा लेने के लिए कृत-संकल्प हुआ। तदर्थ वर्तमान युग की देशभक्ति से संवेष्टित अधिकांश राष्ट्रीय रचनाएं सत्याग्रहियों के त्याग, उत्सर्ग, वीरता एवं बलिदानी भावना से परिपूरित हैं। 'ये कवि सिंहासन पर आसीन रहनेवाले उपदेशक नहीं थे। इसीलिए इनकी अधिकांश रचनाएं वीर सत्याग्रहियों के युद्ध के गान हैं। इनमें भावानुभूति और सच्चाई है।'[६०]

द्विविध नीतियों में माननेवाले कवियों में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी, ठाकुर गोपालशरण सिंह, माखनलाल चतुर्वेदी, सियाराम शरण गुप्त, बाल कृष्ण शर्मा `नवीन`, सुभद्राकुमारी चौहान, पंडित हरिप्रसाद `वियोगी हरि`, रामधारी सिंह `दिनकर` प्रभृति हैं जिन्होंने अपनी लेखनी से राष्ट्रीय चेतना को उजागर करते हुए लक्ष्य प्राप्ति में यथेष्ट योगदान दिया है। इन कवियों के राष्ट्रीय काव्य का संक्षिप्त अनुशीलन करने का यत्न किया जा रहा है।

(१) मैथिलीशरण गुप्त :

गुप्त जी `भारत-भारती` द्वारा देश का उद्बोधन द्विवेदी युग में कर चुके हैं। यह निर्दिष्ट किया जा चुका है कि उनकी `भारत-भारती` ने किस तरह अतीतकालीन उज्ज्वल चित्रों को अंकित करके राष्ट्रीय नवजागरण में सहयोग दिया। अब गांधी जी के सफल नेतृत्व के द्वारा संचालित आंदोलनों के व्यापक प्रभाव से गुप्त जी का कवि हृदय मचल उठा। अत्याचारी एवं अन्यायी शासकों के करों में लौह-शस्त्रों को देखकर उनका प्रतिकार करनेवाले निहत्थे भारतीय सत्याग्रहियों की महान निर्भीकता एवं सफलता का सोत्साह वर्णन करते हुए कवि कहते हैं -

`अस्थिर किया टोपवालों को गांधी टोपी वालों ने,
शस्त्र बिना संग्राम किया है इन माई के लालों ने।
अपने निश्चय पर ये दृढ़ हैं, मारो, पीटो बन्द करो,
अजब बांकपन दिखलाया है इनकी सीधी चालों ने।
यहां जमाई है अपनी जड़ पश्चिम के जिन पौधों ने,
असहयोग के फल उपजाये उनकी ऊंची डालों ने।
क्या कर लिया मशीनगनों ने, संगीनों ने भालों ने।
गोलों को भी उड़ा दिया है, यहां रुई के गालों ने।`[६१]

उक्त पंक्तियों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गुप्त जी गांधीवादी रंग में रंगे हुए राष्ट्रीय कवि हैं। उन्होंने 'भारत भारती' तथा पौराणिक कथानकों पर आधारित कतिपय प्रबंध रचनाओं के द्वारा एक ओर जहां जन-जागरण का सबल प्रयास किया है, वहां दूसरी ओर गांधीवादी नीतियों के माध्यम से जनता को अपने कर्तव्य-पालन के लिए उत्साहित एवं कृत-संकल्प भी कराया है।

(२) रामनरेश त्रिपाठी :

त्रिपाठी जी के काव्य का प्रमुख उद्देश्य जन-मानस में वीरोचित भावनाओं का स्फुरण रहा है। किन्तु उक्त उद्देश्य की संप्राप्ति के हेतु अन्य कवियों की तरह उन्होंने ऐतिहासिक अथवा पौराणिक आख्यानों को माध्यम नहीं बनाया, अपितु काल्पनिक संदर्भों की उत्कृष्ट एवं विलक्षण सृष्टि के द्वारा काव्य-सर्जन किया। उनके 'पथिक', 'मिलन' और 'स्वप्न' तीनों काव्य-संग्रह देशभक्ति की गरिमामय भावना से परिपूरित हैं। पराधीनता को कलंक मानकर उससे मुक्त होने की भावना को व्यक्त करते हुए कवि कहते हैं -

'तुम अपने सुख प्रबंध के हो न पूर्ण अधिकारी।
यह मनुष्यता पर कलंक है, है प्रिय बन्धु तुम्हारी।।
पराधीन रहकर अपना, सुख शोक न कह सकता।
यह अपमान जगत में केवल पशु ही सह सकता।।'[६२]

त्रिपाठी जी गांधीवादी विचारधारा के प्रबल पोषक रहे हैं। वे मन, वाणी और कर्म से पूर्णतया गांधी-प्रतिभा से प्रभावित होकर उनके सिद्धान्तों का आजीवन परि-पालन करते रहे। 'गांधीवाद में सत्य और अहिंसा के प्रति जो तीव्र आग्रह है, बलिदान, त्याग और देशभक्ति की भावनाएं हैं, समाज-सेवा के जो भव्य और अमर आदर्श प्रतिष्ठित हैं, अछूत, नारी-समाज, किसान, मजदूर आदि दीन दलितों के प्रति जो

प्रेम भाव है उसका सर्जीव चित्र अपने समग्र रूपों के साथ त्रिपाठी जी की राष्ट्रीय कृतियों में प्रतिष्ठित हैं ।'[६३]

आत्म-समर्पण की भावना से परिपूरित देश-प्रेम ही सच्चा प्रेम है कहकर त्याग की महिमा गाते हुए कवि कहते हैं -

'सच्चा प्रेम वही है जिसकी,
तृप्ति आत्म-बलि पर हो निर्भर ।
त्याग बिना निष्प्राण प्रेम है,
करो प्रेम पर प्राण-निछावर ।।
देश-प्रेम वह पुण्य क्षेत्र है,
अमल असीम त्याग से विलसित ।
आत्मा के विकास से जिसमें,
मनुष्यता होती है विकसित ।'[६४]

गांधीवादी बलिदानी भावना का उल्लेख करते हुए प्रसन्न मुद्रा से मृत्यु का वरण करने का संदेश कवि की इन पंक्तियों में व्यक्त हुआ है -

'जब तक साथ एक भी दम हो,
हो अवशिष्ट एक भी धड़कन ।
रखो आत्म-गौरव से ऊँची,
पलकें, ऊँचा सिर, ऊँचा मन ।।
एक बूँद भी रक्त शेष हो,
जब तक तन में है शत्रुंजय ।
दीन वचन मुख से न उचारो,
मानो नहीं मृत्यु का भी भय ।।

\+ \+ \+

मृत्यु एक सरिता है जिसमें,
श्रम से कातर जीव नहाकर ।
फिर नूतन धारण करता है,
कायारूपी वस्त्र बहाकर ।।`६५

वस्तुत: त्रिपाठी जी के काव्य में देशभक्ति का ~~एक~~ रसात्मक रूप अभि-व्यंजित हुआ है । देशप्रेम एवं त्याग की महत्ता का प्रतिपादन उन्होंने बड़े ही मनोरम एवं उदात्त स्वरों में किया है । पौराणिक गौरव गाथाओं एवं घटना-प्रसंगों का अवलम्बन लिये बिना सच्ची भावप्रवणता तथा काल्पनिक संदर्भों के माध्यम से कवि आत्म-ज्योति प्रकट कराने का स्तुत्य प्रयास करता है । वास्तव में उनका अंतर्बोध गांधीवादी चिंतन से प्रभावित ही नहीं अपितु अभिभूत भी है ।

(३) ठाकुर गोपालशरण सिंह :

ठाकुर साहब भी गांधीवादी विचारधारा के कट्टर उद्घोषक हैं । उन्होंने `बापू` नामक खण्डकाव्य में महात्मा गांधी का चरित्रांकन करके बापू को भावात्मक अंजलि प्रदान की है । साथ ही युगीय सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का दिग्दर्शन कराके बापू के अप्रतिम व्यक्तित्व को उभारने का यत्न किया है । `नवीन युग` शीर्षक कविता में कवि ने युद्ध नीति को भयंकर कहते हुए शांति-साधना को श्रेयस्कर घोषित किया है । शांति-स्थापन के लिए गांधीवादी अहिंसा को परम तत्व के रूप में स्वीकार करते हुए उसकी महत्ता का जो प्रतिपादन किया है वह दृष्टव्य है -

`अणुबम का युग आया ।
लघुकण ने निज गुप्त शक्ति का, भीषण रूप दिखाया ।
+ + +
युद्ध नीति है परम भयंकर, शांति साधना है श्रेयस्कर,
घोषित है कर रही धरा में, यह विनाश की काया ।

है यह विश्व सदा मंगलमय, पर है यहां विनाश का भी भय,
यह कटु सत्य कभी जीवन में, जा सकता न भुलाया।
भ्रातृ भाव हो यदि मानव में, तो कुछ भीति नहीं है भव में,
इसका समुचित अर्थ विश्व यह, आज समझ है पाया।।'६६

गांधीवादी जीवन-दर्शन को भारत तक ही सीमित न रखकर उसका विश्व भर में प्रसार हो ऐसी आकांक्षा रखते हुए कवि कहते हैं -

चाहे जो संकट आ जावे तुमको तो रहना है विनीत।
यह विश्व उसी का होता है, जिसकी निजत्व पर हुई जीत।।'६७

यहाँ कवि 'निजत्व' पर जीत' प्राप्त करने का उल्लेख करते हुए बहुत ही महत्वपूर्ण गांधीवादी सिद्धान्त के प्रति संकेत करते हैं। गांधी दर्शन की दृढ़ मान्यता है कि व्यक्ति को सर्वप्रथम मनोनिग्रह करते हुए निज पर विजय प्राप्त करनी चाहिए। तभी वह दूसरों के हृदय परिवर्तन के लिए अहिंसात्मक शस्त्र का उपयोग कर सकता है। और सफलता भी प्राप्त कर सकता है। यही शांति-साधना का रहस्य है जो समस्त मानव जाति के उत्कर्ष का संपोषक है। कवि स्वतंत्रता के सत्याग्रही सेनानियों से कामना करता है कि उन्हें संकटकालीन परिस्थितियों में भी कभी शत्रुओं के सम्मुख नतमस्तक नहीं होना चाहिए। संकट को संकट के रूप में ही ग्रहण नहीं करना चाहिए। यही जीवन संगीत है जो सदैव गुंजित रहना चाहिए। यथा-

'कोई भी विपत्ति आ जावे, हृदय कभी भयभीत न हो,
कोई भी जीवन का संकट, संकट हमें प्रतीत न हो।
चाहे इस संसार समर में कभी हमारी जीत न हो,
किन्तु हृदय से दूर हमारे यह जीवन संगीत न हो। ६८

उपर्युक्त उद्धरणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ठाकुर साहब गांधीवादी जीवन दर्शन को भलीभांति आत्सात कर सके हैं । उनकी कविता गांधी-विचारधारा की सहज संवाहिका है ।

(४) पंडित माखनलाल चतुर्वेदी :

`एक भारतीय आत्मा` के नाम से प्रसिद्ध चतुर्वेदी जी का काव्य प्रधानतया राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत है । उनकी ओजपूर्ण कविताओं में स्वातंत्र्य कामना के उपरान्त सर्वस्व त्याग एवं प्राणार्पण की आतुरतापूर्ण राष्ट्रीय भावनाओं का स्वर सर्वत्र मिलता है । भारतीय स्वातंत्र्य आंदोलन को वाणी का वरदान प्रदान करनेवाले प्रमुख राष्ट्रवादी कवियों में उनका श्रेष्ठ स्थान है । उनकी काव्यगत विशेषता का उल्लेख करते हुए डा० जयकिशन प्रसाद लिखते हैं- `उदात्त आदर्शों की रक्षा के लिए जो कवि बल बलिदान की भावना को लेकर मृत्यु का जय-जयकार कर रहा हो, जो केवल स्वप्न लोक में ही नहीं, वास्तविक जगत में भी राष्ट्रीय पथ का पथिक रह चुका हो, और जेलों में ही जिसके रवि उगे और अस्त हुए हों, उस कवि के काव्य की ओजस्विता और मार्मिकता का तो भला कहना ही क्या ?`[६६]

`पुष्प की अभिलाषा`, `कुंज कटीरे यमुना तीरे`, `कैदी और कोकिल`, `जवानी` आदि कविताएँ राष्ट्रीय एवं विद्रोह की भावनाओं से भरी हैं, जिन्होंने भारतीय जनमानस में बलिदानी-भावना युक्त राष्ट्रीय चेतना जागृत करने में अपना विशिष्ठ रंग जमाया था । मानव के पारस्परिक ईर्ष्या और विद्वेष, घृणा और वैमनस्य, वेदना और उत्पीड़न, संघर्ष और क्रांति में `जवानी` कविता की प्राय: प्रत्येक पंक्ति ने संजीवनी का काम किया । `जवानी` कविता में कवि का आक्रोश कहीं-कहीं विध्वंस की सीमा का भी स्पर्श करता दृष्टिगत होता है । किन्तु गांधी जी के अभूतपूर्व व्यक्तित्व एवं उनकी सम्मोहक शक्ति का प्रभाव कवि पर पडे बिना रह नहीं सकता । उग्रविचारशील कवि होने पर भी गांधी जी के मौलिक और दिव्य सिद्धान्तों के प्रति उनकी श्रद्धा उत्पन्न होने

लगी । वस्तुत: उनकी रचनाओं में गांधी जी के असाधारण व्यक्तित्व, सत्याग्रह, अहिंसात्मक क्रांति, त्याग एवं सेवा का पूर्ण स्तवन मिलता है । यथा-

'तेरी अंगुली हिली, हिल पड़ा भावोन्मुक्त जमाना,
अमर शांति ने अमर क्रांति अवतार तुझे पहचाना ।
\+ + +
है तेरा विश्वास गरीबों का धन, अमर कहानी,
तो है तेरा श्वास, क्रांति की प्रलय लहर मस्तानी ।
कंठ भले हों कोटि-कोटि , तेरा स्वर उनमें गूंजा,
हथकड़ियों को पहन राष्ट्र ने पढ़ी क्रांति की पूजा ।'[७०]

तथा- 'ले कृषक सन्देश, कर बलि-वंदना, ध्वज तिरंगे की करो सब अर्चना,
घूमता चरखा लिए, गिरि पर चढ़ो, ले अहिंसा शस्त्र आगे ही बढ़ो ।'[७१]

सत्याग्रही की एकनिष्ठ आस्था और अहिंसामूलक चिन्तन का स्वयं अनुभव करते हुए कवि लिखते हैं -

'अब भी शस्त्र रहित प्रस्तुत हूं, रोकूंगा-मारे-स्वच्छन्द ।
मेरे रक्त, स्वेद, आंसू से- उन्हें, विश्व को हो आनन्द ।
गर्जन तर्जन में चंचलता, आत्म-विसर्जन में क्या रोष ?
दोषी हैं, हां दोषी हैं वे, -फिर क्या उसका बदला दोष ?
रखते हैं तलवार अकड़कर, करते हैं वे तीखे वार,
होंगी तोपें, तो भी दूंगा, वारों पर फूलों के हार ।
होगा वही, करूंगा जो मैं,-पशुबल हो जगती भर का ।
जग के जड़ जीवों का भय ?- भय यहां नहीं जगदीश्वर का ।'[७२]

सत्याग्रही आत्मविश्वास एवं निर्भीकता के साथ घोषित करता है कि

हिंसक शस्त्रों से सज्ज व्यक्ति जड़ जीवों के समान पशुबल ही रखते हैं । आत्म-बल की तुलना में इसका कोई मूल्य नहीं है । ऐसे ही सत्याग्रही पूर्ण अहिंसात्मक रहकर आवश्यकता पड़ने पर आत्म-विसर्जन कर सकते हैं । कवि स्वयं एक सत्याग्रही थे । तदर्थ उन्होंने अपने काव्यों में सदैव ऐसे आत्म-विसर्जन को अधिक महत्व प्रदान किया है । सच्चे कर्मयोगी की तरह वह प्रत्येक कार्य आनंदपूर्ण मन: स्थिति के साथ करता है । फलत: जेल को यातना-स्थल न मानकर तीर्थराज मानने का यत्न करता है । 'मेरा व्रत पूजन' शीर्षक कविता में वे कहते हैं -

'ढेरा मत बोलो, यह मेरा व्रत पूजन है
मन नहीं तन भारतीयों के मिलाता हूँ ।
चक्कर लगाते हुए अलख जगाता हूँ -
यों विश्व बाँधने को प्रेम-बंधन बनाता हूँ ।
नाम ही को पाता हूँ बिलासपुर वासियों में ,
मैं तो तीर्थराज इन सीखचों में पाता हूँ ।
स्वेद की कलिन्दजा में मस्ती की सरस्वती ले,
नयनों में की गंगा बहा त्रिवेणी नहाता हूँ ।'[७३]

लक्ष्य-प्राप्ति के पीछे पागल कवि विवेक खोकर शस्त्रास्त्र हिंसक क्रांति का सहारा कभी नहीं लेता । यह पूर्ण अहिंसात्म शस्त्रास्त्रों का उपयोग पसंद करता है । तभी तो साधन-शुद्धि या उसकी पवित्रता को महत्व प्रदान करते हुए ही लक्ष्य-प्राप्ति पसंद करते हैं । हिंसात्मक मार्ग से प्राप्त देशभक्ति भी उन्हें पसंद नहीं है । यथा-

'पलट जाये चाहे संसार, न लूँगा इन हाथों हथियार ।
पाप से मिली हो तो देव, नहीं है देशभक्ति की चाह ।'

चातकवत् देशभक्ति की चाह लिये जीने और मरनेवाला कवि साधन-शुद्धि को कितना महत्व देता है ? ऐसा कवि जिसका तन, मन, धन और प्राण भी गांधीवाद में रंग गया हो, वह हिंसा, विप्लव आदि में कैसे विश्वास रख सकता है ? हिंसावादी कवि सारे विश्व को मारकर भोगवादी जीव की तरह संसार-सुख भोगने की कामना करेगा, आत्म-समर्पण की नहीं ।

उपर्युक्त कतिपय उद्धरणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि चतुर्वेदी जी गांधीवादी चिन्तन एवं दर्शन से पूर्णतया प्रभावित थे और सत्य एवं अहिंसा के सबल शस्त्रों के प्रति उनकी असीम श्रद्धा थी । इन्हीं शस्त्रों के माध्यम से राष्ट्र को अपनी ओजस्वी वाणी में जगाकर, प्रेरित कर उसे स्वतंत्रता के हेतु प्राणार्पण के लिए तैयार करने का आजीवन यज्ञ करते रहे । तदर्थ यह कहना अधिक समीचीन होगा कि उनकी वाणी में ओज एवं उग्रता होते हुए भी वे पूर्णतया गांधीवादी कवि थे और उनके सिद्धान्तों में उन्हें अटल विश्वास था ।

(५) सियारामशरण गुप्त :

गांधी-दर्शन के प्रबलतम गायक सियाराम शरण गुप्त गांधीवादी कवियों में अन्यतम स्थान रखते हैं । स्वतंत्रता प्राप्ति के उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने सदैव अहिंसात्मक साधनों का ही अवलंबन लिया है । उनका काव्य स्वानुभूतिपूर्ण और चिरन्तन जीवनादर्शों से परिपुष्ट आस्थावान होने के साथ-साथ सुबोध और सरल अभिव्यक्ति का काव्य है । 'मौर्य विजय', 'पाथेय', 'आर्द्रा', 'मृणमयी', 'आत्मोत्सर्ग', 'बापू', 'उन्मुक्त', 'नकुल' प्रभृति उनकी प्रसिद्ध रचनाएं हैं । उनका समूचा काव्य राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत है । वे गांधीवाद के एकनिष्ठ व्याख्याता थे । उन्होंने गांधी के विचारों एवं जीवन-दर्शन को बड़ी ईमानदारी और सच्चाई के साथ व्यक्त किया है ।

सांप्रदायिकता की परिसीमा में आबद्ध होकर संकुचित मनोदृष्टि के कारण लड़नेवाले हिन्दू-मुस्लिमों के मुँह पर मानो तमाचा लगाते हुए कवि ने 'आत्मोत्सर्ग' नामक काव्य कृति में स्वयं गणेशशंकर विद्यार्थी जी के माध्यम से निम्नांकित - पंक्तियाँ कहलवायी हैं -

'हाजिर मेरा खून तुम्हारा,
फूले-फले अगर इस्लाम ।
अब न मांगों अपने हाथों
अरे बहुत तुमने माँगा ।
हिन्दू-मुसलमान दोनों का
यह संयुक्त राष्ट्र होगा ।'[७४]

कट्टर अहिंसावादी कवि हिंसा का पूर्ण विरोध करते हुए हिंसानल को शमित करने का एक मात्र वास्तविक एवं सच्चा मार्ग अहिंसा ही मानते हैं । 'जयहिंद' काव्य की कुछ पंक्तियां अवलोकनीय हैं -

'हिंसानल से शांत नहीं होता हिंसानल,
जो सबका है वही हमारा भी है मंगल ।
मिला हमें चिर-सत्य आज वह नूतन होकर,
हिंसा का हो एक अहिंसा ही प्रत्युत्तर ।'[७५]

द्वितीय विश्वयुद्ध में हुई बम वर्षा के कारण जो मानव-संहार हुआ उसी से कातर हृदय होकर कवि ने 'उन्मुक्त' गीति नाट्य की सर्जना की । प्रस्तुत कृति में उन्होंने गांधीवादी विचारधारा का प्रबल समर्थन किया है । कवि-हृदय हिंसानल से अत्यधिक क्षुब्ध और उदास है । 'उन्मूलन 'उन्मुक्त' की ये पंक्तियाँ

अहिंसात्मक शस्त्र का कैसा समर्थन करती हैं -

'जानता हूँ निःसंशय,
प्रतिपक्षी है घोर रूप में निर्मम निर्दय।
इसका भय क्या ?- रक्तपात हम नहीं करेंगे,
फेलेंगे सब स्वयं, अहिंसक मरण बनेंगे।'[७६]

गांधीवादी कवि निज-सुधार या स्वत्रुटि-परिमार्जन में मानते हैं। सत्य और अहिंसा ही व्यक्ति का परिमार्जन एवं हृदय परिवर्तन करती है। इसका संस्पर्श पाते ही व्यक्ति उन्मुक्त हो जाता है। उक्त गीति नाट्य का यही मूल संदेश है।

'बापू' उनकी अत्यधिक प्रसिद्ध काव्य-कृति है जिसमें उन्होंने बापू के अद्वितीय प्रतिभा सम्पन्न अंतर्बाह्य व्यक्तित्व एवं कृतित्व के प्रति अपनी भावांजलि ~~अर्घ्य~~ अर्पित की है। इसके सातवें उच्छ्वास में 'बापू' की गौरवगाथा गाते हुए कवि कहते हैं -

'विश्व-महावंश-पाल,
धन्य, तुम धन्य हे धरा के लाल।
द्रुम-कुल के अबोध,
वीतराग वीतक्रोध,
तुम में पुरातन है नूतन में,
नूतन चिरन्तन में।'[७७]

बापू धरित्री का सामान्य मानव नहीं है। वह तो महामानव है जो हिंसानल से परितप्त मानवमात्र को ~~नि~~ दिव्य-प्रेम और आत्मज्योति की स्वर्गिक

रश्मियों के प्रपात के द्वारा परम शांति प्रदान करने इस धरती पर अवतरित हुए हैं। यथा-

'आई अहा ! मूर्ति वह हँसती,
जैसे एक पुण्य-रश्मि स्वर्ग उतर के
अन्ध तमः पुंज छिन्न करके
दीख पड़ती अन्तर के अन्तर में धँसती।'

तथा- 'प्रेम है स्वयं की जीत,
प्रेम की ही अन्त में विजय है
प्रेम रत्न नित्य ज्योतिर्मय है,
फैला दो उसी का मृदु दीप्ति-हास,
हिंसा के तमिस्र का स्वयं हो ह्रास।'७८

उपर्युक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट है कि गांधीवादी विचारधारा के समर्थ गायक सियाराम शरण जी सच्चे अर्थों में शतप्रतिशत बापू के ही सिद्धान्तों का परिपालन करते थे। गांधीवादी रंग में वे पूर्णतः रंग गये थे। अतः उनकी रचनाओं में किंचित मात्र भी आक्रोश नहीं मिलता है। यहां तक कि राष्ट्रीयता में आवश्यक सहज आवेग का भी अभाव परिलक्षित होता है। युगीन अन्य गांधीवादी कवियों की तुलना में सियारामशरण जी ने गांधी जी को अधिक गहराई से जिया है।

(६) बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' :

उग्र नीति में सक्रिय कवियों की पंक्ति में प्रथम स्थान रखनेवाले कवि नवीन जी प्रधानतया वीर रस के कवि हैं। स्वाधीनता के सेनानी नवीन जी की वाणी में उग्रता, निर्भीकता एवं सिंहगर्जना करने की क्षमता थी। भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए आतुरता एवं छटपटाहट भी उनमें परिलक्षित होती है। फलतः उनके काव्य

में बिजली का-सा वेग, बादलों की-सी घड़घड़ाहट और ज्वालामुखी-विस्फोट के भीषण लावे-सी प्रभावोत्पादकता दृष्टिगत होती है। उनकी 'विप्लव गायन' शीर्षक कविता इसका साक्ष्य उपस्थित करती है -

'कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ, जिससे उथल-पुथल मच जाए।
एक हिलोर इधर से आए, एक हिलोर उधर से आए।
प्राणों के लाले पड़ जायें, त्राहि त्राहि रव नभ में छाए।
नाश और सत्यानाशों का, धुआँधार जग में छा जाए।
\+ \+ \+
नियम और उपनियमों के ये बन्धन टूक-टूक हो जाएँ।
विश्वम्भर की पोषक वीणा के सब तार मूक हो जाएँ।'[७६]

प्रस्तुत पंक्तियों में कवि में परिवर्तन की आतुरता इतनी सीमा तक पहुंच गई है कि वह हिंसात्मक क्रांति का सहारा लेता हुआ सृष्टि के सर्वनाश का भी आह्वान करता है। युगीन परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में यदि इन पंक्तियों को रखकर देखा जाय तो कवि का यह आक्रोश स्वाभाविक, कहा जा सकता है। देश में सर्वत्र विद्यमान राजनीतिक परिस्थिति के प्रति तीव्र असन्तोष, राष्ट्रीय भविष्य के लिए गहरी चिन्ता, परंपरागत रूढ़ियों का घोर विरोध एवं सामाजिक संकीर्ण वृत्तियों के प्रति अनास्था की विद्रोही भावना का उद्रेक हो रहा था। इन परिस्थितियों में आमूल परिवर्तन एवं नाविन्य के लिए परम उत्सुक 'नवीन जी' किसी भी तरह परिवर्तन लाने के लिए राष्ट्र वीरों को उत्प्रेरित करते हैं।

नवीन जी के काव्य का फलक बड़ा व्यापक एवं यथार्थ के धरातल पर आधृत है। अपने राष्ट्र से एकनिष्ठ प्यार करना, कृषक एवं दरिद्र देशवासियों के दुःख-सुख के प्रति सहानुभूति रखना, विदेशी शासन की क्रूरता की व्याख्या करना, स्वाभिमान सुरक्षा एवं अतीत गौरव का गान करना, स्वतंत्रता प्राप्ति की बलवती

इच्छा रखना आदि विभिन्न विषयों को लेकर उनकी लेखनी ने ४५ वर्षों तक राष्ट्र की अनवरत सेवा की है । उनके स्फुट एवं प्रबंध दोनों ही प्रकार के काव्यों में उक्त राष्ट्रीय काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों का समावेश है ।

उग्र विचारधारा के होते हुए भी नवीन जी गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित हुए हैं । युगान्तरकारी व्यक्तित्ववाले जननायक महात्मागांधी के सम्मोहक प्रभाव से युग का कोई भी राष्ट्रीय कवि असम्पृक्त नहीं रह सका । राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलनों में सक्रिय सहयोग देनेवाले नवीन जी एकाधिक बार जेल में जा चुके हैं ।

अन्य राष्ट्रीय कवियों की तरह नवीन जी को भी स्वतंत्रता के दीवाने सत्याग्रहियों के प्रति अनुराग है । तदर्थ जेल से मुक्त होकर आये सत्याग्रहियों का सहर्ष स्वागत करते हुए वे कहते हैं -

'माँने किया पुकार बढ़ा तू चढ़ा हुआ कुरबान ।
हमने देखा तुझे टहलते सिकचों के दरम्यान ।।
हाथों में थी मूँठ कभी बैठा चक्की पर गाते ।
कम्बल बिछा ओढ़ कम्बल दिन बिता दिये मदमाते ।।
बहु दिनों के बिछुडे प्यारे अन्तर प्रिय से सट जा ।
आज रिहाई हुई दौड़ आ मोहन गले लिपट जा ।'[८०]

तथा- ताला कुंजी लालटेन जंगला कैदी वे सब हैं ठीक ।
खींच चुकी है नौकरशाही अपने सर्वनाश की लीक ।
तेरी चक्की में वे गेहूँ पिसते हैं, पिस जाने दो ।
चक्की पिसनेवालों को मिट्टी में मिल जाने दो ।'[८१]

बापू के द्वारा सन् १६२०-२१ के सत्याग्रह आंदोलन की स्थगितता की उद्घोषणा करने पर नवीन जी की प्रतिक्रिया `पराजय` गीत में दृष्टिगत होती है -

`मुझे न छेड़ो, इतिहासों के पन्नों में गतिधीर हुआ,
आज खड्ग की धार कुंठिता है खाली तुणीर हुआ ।
विजय पताका झुकी हुई है, लक्ष्य भ्रष्ट यह तीर हुआ ।।
बढ़ती हुई कतार फौज की सहसा अस्त-व्यस्त हुई ।
त्रस्त हुई भावों की गरिमा, महिमा सब संत्रस्त हुई ।।`[८२]

नवीन जी के काव्य का अनुशीलन करने पर उनके काव्य में दो विचार-धाराएं स्पष्टरूपेण परिलक्षित होती हैं । `नवीन एक ओर यदि गांधीवादी हैं तो दूसरी ओर क्रांतिवादी, एक ओर अहिंसावादी हैं तो दूसरी ओर विप्लववादी उनकी राष्ट्रीय भावना हिंदी कविता की राष्ट्रीय विचारधारा के दोनों फूलों का स्पर्श पाकर आगे बढ़ी है, किन्तु इस विकास में स्वाभाविकता है, सच्चाई है, और यथार्थ की अनुपम गहराई भी ।`[८३] शर्मा जी का यह अभिमत नवीन जी एक ओर गांधीवादी और अहिंसावादी हैं, स्वीकार नहीं किया जा सकता । यद्यपि नवीन जी गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित हुए हैं और `विनोबा स्तवन` तथा `महात्मागांधी` जैसी काव्य कृतियों का भी उन्होंने सर्जन किया है, तथापि उनका कवि पूर्ण गांधीवादी नहीं बन सका । जो प्रभाव चतुर्वेदी जी के विचार, वाणी और व्यवहार में परिलक्षित होता है, वह नवीन जी में दृष्टिगत नहीं होता । उनकी वाणी में रह-रहकर आवेग और आक्रोश व्यंजित हो ही जाता है जिसके मूल में विध्वंस की ध्वनि सुनाई देती है ।

(७) सुभद्राकुमारी चौहान :

राष्ट्र पर सर्वस्व समर्पित कर देनेवाले शहीदों की प्रशस्ति गा- गाकर

राष्ट्र की चेतना को जागृत करने का कार्य प्राय: सभी राष्ट्रीय कवियों ने किया है । सुभद्राकुमारी चौहान ने भी अपनी अत्यन्त ओजस्वी कविताओं के द्वारा उक्त कार्य सम्पन्न किया जिससे राष्ट्रीय काव्यधारा को गति प्राप्त हुई । प्रशस्तियों के द्वारा वीरपूजा की प्रवृत्ति सभी राष्ट्रीय कवियों की विशेषता रही है । पुराण या इतिहास के ज्वलन्त प्रसंगों एवं व्यक्तियों का वीरोचित विवरण करके उन्होंने राष्ट्रीयता के भावों को उजागर करने का स्तुत्य प्रयास किया है । सुभद्राकुमारी की 'फांसी की रानी' कविता इस तथ्य का साक्ष्य ~~किया है । स करती~~ प्रस्तुत करती है जिसमें राष्ट्रीय भावों की उत्तेजनापूर्ण अभिव्यक्ति हुई है -

'बुंदेले हर बोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मरदानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ।
+ + +
---यहीं कहीं पर बिखर गई वह,
भग्न विजय माला- सी ।
उसके फूल यहां संचित हैं,
है यह स्मृति-शाला-सी ।।
रानी से भी अधिक हमें अब
यह समाधि है प्यारी ।
यहां निहित है स्वतंत्रता की,
आशा की चिनगारी ।'[८४]

'गांधी जी के प्रति' काव्य में भी सुभद्रा जी की यही वीरपूजा की प्रवृत्ति परिलक्षित होती है । गांधी जी की प्रासिभ विशेषताओं से प्रभावित कवयित्री उन्हें भावांजलि अर्पित करते हुए लिखती हैं -

'भूखे नंगे दीन बंधुओं पर लख अत्याचार ।
दीनबंधु की आँखों से फूटी करुणा की धार ।।
ईसा चढ़ा क्रूस पर फिर से प्रभु उसका कल्याण करें ।
खेल रहा अपने प्राणों पर प्रभु दधीचि का त्राण करें ।।'[८५]

बापू ने भारतीय जनसमाज में राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक क्रांति लाने के लिए विविध प्रवृत्तियाँ अपनायीं जिनमें तकली या चरखे पर सूत कातने की भी प्रवृत्ति थी । यरवड़ा जेल में नियमित चलानेवाले कताई यज्ञ से प्रभावित कवयित्री लिखती हैं -

'मानचित्र अंकित भारत का कृषकों की कृश काया में ।
सब रहस्य है छिपा हमारी इस निद्रा की माया में ।।
जाकर देखो कैसे कतता सूत प्रेम का निर्मल-विमल ।
पूने में यरवदा जेल में तरु रसाल की छाया में ।।'[८६]

सुभद्रा जी गांधी जी के अहिंसात्मक आंदोलनों से विशेष प्रभावित हुई हैं । अहिंसावादी नीति की सराहना करते हुए मानव का प्रत्येक कार्य अहिंसा की आधारशिला पर होने की कामना व्यक्त करती हैं -

'हमारी प्रतिभा साध्वी रहे, देश के चरणों पर ही चढ़े ।
अहिंसा के भावों में मस्त आज यह विश्व जीतना पढ़े ।
हम हिंसा का भाव त्यागकर विजयी वीर अशोक बनें ।
काम करेंगे वही कि जिसमें लोक और परलोक बनें ।।'[८७]

सुभद्रा जी के काव्य का अनुशीलन करने पर एक तथ्य सामने आता है कि उनके काव्य में 'उग्र' एवं 'नर्म' नीतियों की द्विविध विचारधारा का संस्पर्श विद्यमान है । 'फांसी की रानी' काव्य में एक ओर उनका उग्रतापूर्ण भावात्मक रूप प्रकट हुआ है तो दूसरी ओर गांधीवादी प्रभाव में आकर लिखित उपर्युक्त कतिपय

उद्धरणों में 'नर्म' विचारधारा का भावात्मक रूप प्रस्फुटित हुआ है । 'झाँसी की रानी' काव्य-सर्जन के पीछे कवयित्री का महद् उद्देश्य 'नवीन जी' की तरह ध्वंसात्मक हिंसा के द्वारा स्वाधीनता-प्राप्ति का नहीं रहा, अपितु देश की जनता को जागृत करते हुए राष्ट्र के लिए शहीद हो जाने के पावन भावोद्रेक के हेतु वीर-प्रशस्ति के रूप में रहा है । कुल मिलाकर सुभद्रा जी को गांधीवादी विचारधारा के समुद्र में अवगाहन करनेवाली नर्म-दलीय कवयित्री के रूप में ही स्वीकार कर सकते हैं ।

(८) पंडित हरिप्रसाद जी वियोगी हरि :

वियोगी हरि भी गांधीवादी राष्ट्रीय कवियों में निजी स्थान रखते हैं । वीरत्व उनकी कविता का प्रमुख स्वर है । गांधी जी के युगान्तरकारी व्यक्तित्व से शायद ही कोई कवि प्रभावित हुए बिना रहा होगा । वियोगी जी भी उनसे प्रभावित ही नहीं अपितु उनके प्रत्येक लघुगुरु कार्य में संलग्न रहे । 'असहयोग वीणा', 'चरखे की गूंज', 'चरखा स्त्रोत' आदि उनकी कृतियां हैं जो हिन्दी साहित्य की राष्ट्रीय काव्यधारा में विशेष महत्व रखती हैं । देश के लिए शहीद हो जानेवाले सत्याग्रहियों के प्रति वियोगी जी के मन में अपूर्व श्रद्धा एवं स्नेह है । उनकी प्रशस्तियां गाते हुए उन्होंने वीर सतसई लिखी है जो वीर भावों के प्रदर्शन का अन्यतम काव्य संग्रह है । उदाहरणार्थ -

'पावस में ही धनुष अब नदी तीर ही तीर ।
रौदन ही में लाल दृग, नवरस ही में बीर ।।'[८८]

और- 'झूमत हैं जहँ मत्त है सहज सूर दिन रैन ।
लटकि लजीले खेल तहँ, मटकि बचावत नैन ।।'[८९]

(९) श्यामनारायण पांडेय:

पांडेय जी वीर-रस के सिद्ध कवि हैं । ये उग्र नीति में सक्रिय कवियों में

अपना स्थान निर्मित करनेवाले और निर्भीकता, ओजस्विता एवं प्राणार्पण का बलिदानी वातावरण निर्मित करनेवाले कवि हैं। प्राय: दो दशकों से अधिक समय तक कवि सम्मेलनों में कविता-पाठ करनेवाले ये कवि सदैव श्रोतागण से समादृत हुए हैं।

उन्होंने प्रबंध एवं मुक्तक दोनों प्रकार के काव्य लिखे हैं। उनकी रचनाओं में `चाहे `हल्दीघाटी`, `जौहर` जैसे महाकाव्य हों, चाहे `तुमुल`, `जय हनुमान` या `गोरावध` जैसे खण्डकाव्य हों, चाहे `माधवी`, `आरती`, `रिमझिम` या `~~अंससे~~ `आंसू के कण` जैसे स्फुट काव्य हों- सब में वीर भावना की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है जिसके परिणाम स्वरूप नवयुवकों को सच्ची प्रेरणा प्राप्त हुई है। उनका समूचा काव्य राष्ट्रीयता के निर्माण में उत्प्रेरक बनकर रहा है।

`पांडेय जी उद्बोधन के कवि हैं। आधुनिक हिन्दी साहित्य में उद्बोधन एवं प्रेरणा का जितना काव्य-सर्जन हुआ उसमें पांडेय जी का काव्य अपनी ओजस्विता एवं प्रबल भावव्यंजना की दृष्टि से अनूठा है। वीर-पथ स्वीकार करने के हेतु तरुण वर्ग को उद्बोधित करते हुए वे कहते हैं -

`नहीं देखते सतियों के जलने का अंगार कहाँ?
राजपूत तेरे हाथों में है नंगी तलवार कहाँ?`[६०]

प्रेरणा के साथ-साथ वे उन्हें कर्तव्य-पथ की ओर अग्रसर करते हुए ~~मदन~~ प्राणार्पण के लिए भी उपदिष्ट करते हैं -

`हम माता के गुण गाएंगे, बलि जन्म-भूमि पर जाएंगे।
अपना झंडा फहरायेंगे, हम हाहाकार मचायेंगे।।`[६१]

पांडेय जी सशस्त्र क्रांति में विश्वास करते हुए युगीन विषम परिस्थितियों

के प्रति आक्रोशमूलक प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। उनके काव्य में `नवीन जी` की-सी ओजस्विता, तड़पन एवं प्राणार्पण की बलिदानी भावना दृष्टिगत होती है। उनका कवि गांधीवादी जीवन दर्शन से उतना प्रभावित नहीं हो पाया जितना गांधीवादी कवि ।

(१०) रामधारी सिंह `दिनकर`:

आधुनिक हिंदी की काव्य धारा के अजस्र प्रवाह में दिनकर जी का पदार्पण छायावाद की पीठिका पर हुआ। फलत: विरासत के रूप में उन्हें `द्विवेदी` एवं `छायावादी` युग की अनेक प्रवृत्तियां प्राप्त हुईं। उस समय समस्त युग पर `महात्मागांधी` एवं `मार्क्स` की विचार-धाराएं सबको प्रभावित कर रही थीं । तदर्थ दिनकर जी ने भी इन्हें युगधर्म के रूप में स्वीकार किया । उनकी कविता का मूल स्वर क्रांति एवं विद्रोह है । जन-जन में जागरण का नव-स्वर एवं नवीन चेतना प्रस्फुटित करना उनके राष्ट्रीय काव्य का प्रमुख लक्ष्य रहा है। कवि की प्रसिद्ध राष्ट्रीय काव्यकृतियों में `रेणुका`, `हुंकार`, `सामधनी`, `कुरुक्षेत्र`, `बापू`, इतिहास के आंसू`, `परशुराम की प्रतीक्षा`, `मूर्ति तिलक प्रभृति हैं । कवि प्रारंभ से ही कविता को क्रांति-वाहिका के रूप में स्वीकारते करते हैं । सन् १९३५ ई० में प्रकाशित प्रथम कृति `रेणुका` में कवि ने क्रांति का बीजवपन कर दिया था -

`क्रांति-धात्रि कविते । जागे, उठ अंबर में आग लगा दे ।
पतन पाप पाखंड जले, जग में ऐसी ज्वाला सुलगा दे ।।`[६२]

क्रांति के प्रधान स्वर को लिये निर्मित की गई उनकी अन्य रचनाएं `हुंकार`, `सामधेनी`, कुरुक्षेत्र, ``रश्मिरथी`, `परशुराम की प्रतीक्षा` आदि हैं । कवि की दृढ़ मान्यता है कि युगीन विषमताओं कुंठाओं एवं विडम्बनाओं का उन्मूलन करने के लिए परिवर्तन आवश्यक है और उसके लिए क्रांति ही प्रबल साधन-शस्त्र है। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं -

`~~श्वानों~~ श्वानों को मिलता दूध-वस्त्र, भूखे बालक अकुलाते हैं,
मां की हड्डी से चिपके, ठिठुर जाड़ों में रात बिताते हैं,
युवती के लज्जा-वसन बेच, जब व्याज चुकाये जाते हैं ।
मालिक जब तेल फुलेलों पर पानी-सा द्रव्य बहाते हैं ,
पापी महलों का अहंकार देता मुफको तब आमंत्रण ।`[६३]

तथा- `कह दे शंकर से आज करें,
वे प्रलय नृत्य फिर एक बार,

सारे भारत में गूंज उठे
हर-हर-बम का फिर महोच्चार ।'[६४]

और- 'स्वातंत्र्य पूजता न मैं तुझे
इसलिए कि तू सुख-शांति-रूप,
हां, उसे पूजता जो चलता
तेरे आगे नित क्रान्ति रूप ।'[६५]

वस्तुत: दिनकर का स्वतंत्रता पूर्व का काव्य क्रान्ति अथव अंगारों से सजा हुआ काव्य है । भले ही 'रसवन्ती' की रससिक्त धारा में वह क्षणिक विनिमज्जित करने का यत्न करता हो, अपितु जनता की बलवती मांग की अवहेलना वह न कर सका । तिलक की-सी प्रभा और आवेग लेकर वे हिन्दी काव्य के क्षेत्र में अवतीर्ण हुए थे । उनका कवि-हृदय स्वभावत: क्रांति का उपासक एवं समर्थक होने के कारण सत्य एवं अहिंसामूलक गांधीवादी नीति को अपनाने में हिचकिचाता रहा। वह गांधी-नीति को पराजितों की नीति मानता है । तदर्थ सत्याग्रह के आकस्मिक स्थगन पर 'अपराजितों की पूजा' जैसे काव्य लिखकर कवि ने गांधी-नीति का विरोध भी किया । 'महामानव की खोज' काव्य में तो कवि गांधी नीति और दर्शन का खुलेआम खंडन करता है । 'कुरुक्षेत्र' में भीष्म एवं युद्धिष्ठिर के संवाद के अंतर्गत कवि गांधी-नीति को 'क्लीव धर्म' ही घोषित कर देता है । गांधी दर्शन को तो वह क्षमा और दया के बेल-बूटों से क्लीव धर्म को सजानेवाला माध्यम ही मानता है । इसीलिए वह युद्धिष्ठिर को नहीं, भीम और अर्जुन को चाहता है । -

'रे । रोक युद्धिष्ठिर को न यहाँ,
जाने दे उनको स्वर्ग धीर ।
पर फिरा हमें गांडीव-गदा,
लौटा दे अर्जुन-भीम वीर ।'[६६]

किन्तु 'नवीनजी', 'एक भारतीय आत्मा' प्रभृति उग्रतामूलक चिन्तन करने वाले कवियों का प्रातिभ-संस्कार महात्मा गांधी के दिव्य, पारस व्यक्तित्व का संस्पर्श पाकर जैसे प्रभावित हुआ, वैसे ही दिनकर जी का अपरिवर्तनशील व्यक्तित्व जो अंधाधुंध क्रांति के ही अंगारों को उगलता रहता था, - गांधी जी के अतलवर्ती गहन-गंभीर व्यक्तित्व का संस्पर्श पाकर नवोदित सूर्य की तरह नवीन आभा और नवीन दृष्टि लेकर प्रस्तुत हुआ। क्रांति के विध्वंसरक्त कवि ने जब अनुभव किया कि भारत के लिए क्रांति से अधिक श्रेयस्कर मार्ग गांधी का ही अहिंसात्मक मार्ग है तब वह गांधी को महामानव के रूप में देखने लगा। अहिंसा रूपी महासमुद्र में हिंसा की छोटी-मोटी लहरियों का स्थान वह समझने लगा।

'बापू' काव्य में उसकी भूमिका के अंतर्गत स्वयं कवि अपने पर पड़े बापू के प्रभाव का संकेत करते हुए लिखते हैं -

'बापू के इर्द-गिर्द कल्पना बहुत दिनों से मंडरा रही थी- कई बार छिटपुट स्पर्श भी हो गया, पर तूलिका कुछ कर पाने में असमर्थ रही।'[६७]

बापू के प्रति उद्भूत कवि की आकस्मिक आस्था के संदर्भ में श्रीमती सिन्हा जी लिखती हैं -

'बापू के प्रति उनकी आस्था वैसी ही है जैसी किसी सिद्ध पुरुष के अलौकिक चमत्कार से अनास्थावादी नास्तिक को भी उसकी शक्ति में विश्वास करने के लिए बाध्य हो जाना पड़ता है।'[६८]

वस्तुत: कवि की आस्था अन्धी आस्था नहीं है। उनका व्यक्तित्व बापू के आध्यात्मिक एवं अलौकिक व्यक्तित्व की ओर आकृष्ट हुआ है। अब तो गांधी जी के प्रति उनके मन में जो आक्रोश था वह विगलित होकर करुणा एवं श्रद्धा में परिणत

हो गया है । अब वे उस विराट के सामने अपना वामनत्व अनुभव करने लगे हैं । उनके क्रांतियुक्त अंगारे मानो लजा उठते हैं । `बापू` काव्य में स्वयं कवि शांति दूत महात्मागांधी जी के व्यक्तित्व का चित्र अंकित करते हुए लिखते हैं -

`पर, तू इन सबसे परे, देख
तुझको अंगार लजाते हैं,
मेरे उद्वेलित ज्वलित गीत
सामने नहीं हो पाते हैं ।
+ + +
तू सहज शान्ति का दूत, मनुज
के सहज प्रेम का अधिकारी,
दृग में उंडेलकर सहज शील
देखती तुझे दुनिया सारी ।`[९९]

कवि मानव-सुलभ कमजोरियों से युक्त अपने व्यक्तित्व और महामानव बापू के व्यक्तित्व की तुलना करते हुए संकोच एवं लघुता का अनुभव करते हैं । वे लिखते हैं-

`कितना विभेद । हम भी मनुष्य,
पर, तुच्छ स्वहित में सदा लीन,
पल-पल चंचल, व्याकुल, विषण्ण,
लोहू के तापों के अधीन ।
पर, तू तापों से परे, कामना जयी,
एकरस, निर्विकार,
पृथ्वी को शीतल करना है,
छाया -द्रुम-सी बाँहें पसार ।`[१००]

इस तरह बापू के व्यक्तित्व से भलीभाँति प्रभावित व सम्मोहित कवि बापू के प्रति सहज ही आकर्षित होता है इसीलिए कवि बापू के अलौकिक एवं आध्यात्मिक व्यक्तित्व की अर्चना करता हुआ दृष्टिगत होता है । `कलिंग-विजय` में भी कवि ने अशोक की अंतिम परिणति का मार्ग अहिंसा में ही देखा है । `कुरुक्षेत्र` का कवि हिंसा-अहिंसा के द्वन्द्वात्मक चिन्तन के पश्चात् `बापू` में आकर सभी द्वन्द्वों की समर्पित समाप्ति का अनुभव करता है और अहिंसा को ही सार रूप में स्वीकार करता दिखाई देता है । जो कवि सच्चा राष्ट्र प्रेमी होता है वह राष्ट्र की अखंडता की उपासना भी करता है । किसी भी शासक की खंडवादी नीति उसे पसंद नहीं आती । अंग्रेजों की `फोड़ो और राज्य करो` नीति के परिणामस्वरूप देश में समय-समय पर जो दंगे हुए और परिणाम में खून की नदियां बहाईं गईं- कवि इन सबको बर्दाश्त नहीं कर पाता है और इन परिस्थितियों का पूरी शक्ति से विरोध करता है । `सामधेनी` में कवि अखंड भारतमाता की दो सन्तानों को आपस में लड़ते हुए देखकर असह्य वेदना का अनुभव करते हुए कराह उठता है । नोआखली और बिहार के दंगों के समय कवि अफसोस व्यक्त करता हुआ कहता है -

`जलते हैं हिन्दू-मुसलमान भारत की आँखें जलती हैं,
आनेवाली आजादी की लो दोनों पाँखें जलती हैं।
वे छुरे नहीं चलते, छिदती जाती स्वदेश की छाती है,
लाठी खाकर भारतमाता बेहोश हुई जाती है ।`[१०१]

इसी तरह अखंड भारत की कामना करनेवाला कवि हिंदू-मुसलमान के पारस्परिक, सांप्रदायिक, झगड़ों से नफरत करता हुआ परस्पर बन्धुत्व की मनोकामना व्यंजित करता है । युद्ध और विध्वंस का उपासक कवि भारतीय अखंडता के लिए गांधी-नीति के अनुसार प्रेम और करुणा का आश्रय लेता है । यही कवि

धीरे-धीरे अन्तर्राष्ट्रीयता के विशाल आकाश में विचरण करने का प्रयास भी करता है । श्रीमती सिन्हा जी कवि की इसी मन:स्थिति का उद्घाटन करती हुई कहती हैं, 'संत्रस्त विश्व के लिए छाया खोजते हुए दिनकर सार्वभौम प्रेम, करुणा और बन्धुत्व का आश्रय लेते हैं ।' १०२

इस तरह महात्मा गांधी के व्यक्ति तत्व एवं कृतित्व से भलीभांति प्रभावित होकर कवि मानो अपना विध्वंसात्मक चिन्तन स्थगित करता-सा और सार्वभौम प्रेम और करुणा का आश्रय ढूंढने का प्रयास करता है ।

पूर्ववर्ती पृष्ठों में उल्लेख किया जा चुका है कि पं० सोहनलाल द्विवेदी का काव्य सर्जन काल भी यही स्वातंत्र्य प्राप्ति का राष्ट्रव्यापी आंदोलन काल है, तदर्थ उनकी अनेक कविताएँ, जो गांधी-दर्शन द्वारा प्रेरित हैं, प्रस्तुत की जा सकती हैं । किन्तु उनकी कविताओं पर परवर्ती पृष्ठों में स्वतंत्र विचार करना है । अत: उनकी कविताओं का दिग्दर्शन यहाँ नहीं किया गया है ।

द्विवेदी युगोत्तर प्राक् स्वातंत्र्यकालीन राष्ट्रीय काव्यधारा का अनुशीलन करने पर यह प्रतीत होता है कि प्रस्तुत काल खण्ड स्वातंत्र्य प्राप्ति का काल है और अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए आतुर विभिन्न राष्ट्रीय कवियों में स्पष्टरूपेण दो भिन्न विचारधाराएं परिलक्षित होती हैं । (१) सशस्त्र क्रांति की उग्र नीति प्रधान और (२) सत्य एवं अहिंसामूलक गांधीवादी नीतिप्रधान । उग्रनीति में दृढ़ आस्था रखनेवाले कवियों में 'नवीन जी', 'श्यामनारायण पांडेय', 'दिनकर' प्रभृति हैं । इन कवियों ने युगीय विषमतापूर्ण राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के प्रति उग्र आवेश एवं तूफानी आवेग है । स्वाधीनता प्राप्ति के लिए प्रत्येक कवि आतुर है । अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए वह क्रांति, विध्वंस एवं युद्ध का सहारा लेता हुआ दृष्टिगत होता है । किन्तु साथ ही यह भी देखने को मिलता है कि गांधी जी के निर्द्वंद्व और पारसयुक्त व्यक्तित्व के संपर्क में आने पर

जैसे लोहा सुवर्ण बनने की कोशिश करता है । तदर्थ उसकी चिन्तन प्रक्रिया में परिवर्तन होने लगता है और उसके लोहयुक्त तपन में शीतलता आ जाती है । उसकी उत्तेजना, उसका आक्रोश एवं विध्वंसात्मक भावों के उफान की गति मंथर हो जाती है । वह प्रेम और अहिंसा के अनलवर्ती समुद्र की गहराई को नापने लगती है । अर्थात् उक्त कवियों पर गांधी जी के अलौकिक व्यक्तित्व का असाधारण प्रभाव परिलक्षित होता है ।

इधर गांधीवादी नीति में आस्था रखनेवाले शेष सभी कवियों का अंतर्बाह्य गांधी जी के सत्य और अहिंसामूलक जीवनदर्शन से प्रभावित ही नहीं अभिभूत दृष्टिगत होता है । वे अपने विचार, वाणी एवं व्यवहार से गांधीवादी नीतियों को ही सब श्रेष्ठ मानते हुए उनका न केवल भारत में अपितु विश्व में प्रसार चाहते हैं । इन कवियों के काव्य का अनुशीलन करने पर एक तथ्य निर्विवाद रूप से सामने आता है कि स्वाधीनता प्राप्ति के लक्ष्य की पूर्ति के लिए गांधीवाद ही श्रेष्ठ मार्ग है, क्रांति एवं विध्वंसमूलक हिंसा का मार्ग नहीं । गांधीवाद ही मानव-मानव के प्रति निश्छल प्रेम करना सिखाकर राष्ट्र में भावात्मक एकता स्थापित कर सकता है जिससे विश्व-मानवता प्रस्थापित हो सकती है । साधन शुद्धि में मानते हुए ये कवि येनकेनप्रकारेण लक्ष्य-पूर्ति में स्वच्छ विश्वास नहीं करते । ये प्रेम, करुणा एवं शांति के उपासक हैं और इसी मार्ग से मानव की विविध विडम्बनाओं को दूर करना पसंद करते हैं । कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि प्रस्तुत युग गांधीवादी युग है और गांधी जी के व्यक्तित्व का एकछत्र प्रभाव प्रायः सभी राष्ट्रीय कवियों की विचारधारा पर परिलक्षित होता है । इतना ही नहीं छायावादी एवं प्रगतिवादी कवियों पर भी प्रकारान्तर से प्रभाव परिलक्षित होता है ।

(च) स्वातंत्र्योत्तर राष्ट्रीय काव्यधारा :

स्वातंत्र्य-प्राप्ति के लिए किये गये हिंसा-अहिंसा मिश्रित संग्राम के

परिणाम स्वरूप अन्तोगत्वा १५ अगस्त १९४७ ई० के दिन भारत को चिरप्रार्थित स्वाधीनता प्राप्त हुई। स्वतंत्रता देवी के आगमन के साथ ही पराधीनता का युग बीत गया। ऐसी पुण्य बेला में समस्त राष्ट्र आनंदाब्धि की तरंगों में तरंगायित होने लगा। राष्ट्री कवियों ने उसके स्वागत-सत्कार में स्वर्णिम किरणों से युक्त उल्लासपूर्ण गीत-कुसुम वितरित किये। भारतीय जन समाज को अपनी उत्कट साधना की सिद्धि प्राप्त हो गई। किन्तु हृदय के एक कोने में कहीं विषाद एवं ग्लानि की छाया भी विद्यमान थी। हमें स्वतंत्रता तो प्राप्त हुई, परन्तु ब्रिटिशों विभेद नीति एवं मुस्लिम लीग के नेता जिन्ना के संकीर्ण और धर्मान्धपूर्ण संकल्प के परिणामस्वरूप पाकिस्तान एवं भारत जैसे दो भिन्न राष्ट्रों में हमें स्वतंत्रता प्राप्त हुई। साम्प्रदायिक विद्वेष के कारण नोआखली के भीषण नर-संहार की आग अभी बुझ न पायी थी। भारतीयों में मुस्लिमों के प्रति प्रतिहिंसात्मक तनावपूर्ण व्याकुलता दृष्टिगोचर होने लगी। राष्ट्रीय कवियों की वाणी जो निरन्तर भावात्मक एकता के संस्थापन में प्रयत्नशील रही, प्रस्तुत परिस्थिति में भी साम्प्रदायिक विद्वेष के विरुद्ध राष्ट्रीय एकता के स्वर में गूँज उठी। फलत: मतवाली जवानियां गांधीवादी अहिंसात्मक मार्ग पर त्याग, बलिदान एवं उदार सहानुभूति के साथ सम्मुख आने लगीं। इन परिस्थितियों में स्वाधीनता की प्राप्ति के साथ-साथ राष्ट्र के सम्मुख दो प्रमुख समस्याएं उपस्थित हुईं। एक ओर राष्ट्र की स्वतंत्रता एवं अखंडता की सुरक्षामूलक समस्या थी तो दूसरी ओर स्वाधीन राष्ट्र के समृद्धिमूलक नवनिर्माण की समस्या थी। गांधी जी राष्ट्र के नवनिर्माण में अपना योगदान प्रदान करें उससे पूर्व उक्त साम्प्रदायिक विद्वेष की तनावपूर्ण मन:स्थिति के आवेश में उन्हें मौत के घाट उतार दिया गया। गांधी जी के आकस्मिक निधन की अप्रत्याशित परिस्थिति ने भारत को करुणा के महासमुद्र में विनिमज्जित कर दिया। भारतीय जनता के साथ-साथ राष्ट्रीय कवियों ने शोकपूर्ण भावांजलियां प्रदान कीं और क्षणिक रुदन के पश्चात् इन कवियों ने भारत-राष्ट्र को पुन: धैर्य दिलाते हुए बापू के कर्तृत्व के प्रति आकर्षित किया और उनकी रीति- नीति पर

विश्वास रखते हुए राष्ट्र-निर्माण के पुनीत यज्ञ में सोत्साह सम्मिलित हो जाने के लिए उपदिष्ट किया । राष्ट्र के युगानुरूप नवीन लक्ष्यों की पूर्ति के निमित्त वे राष्ट्र में जिज्ञासा उत्पन्न करने का यत्न करने लगे ।

पृथक राष्ट्र के रूप में पाकिस्तान के उदय के परिणाम स्वरूप लाखों निरीह भारतीय विस्थापित परिवारों के पुनर्स्थापन की समस्या भी विकट रूप में भारत के सम्मुख उपस्थित हुई । ऐसी परिस्थिति में शासन के उपरान्त राष्ट्रीय कवियों ने देशवासियों को संकटकालीन परिस्थिति में सहयोग और परिश्रम का पाठ सिखाया ।

राष्ट्र के नव-निर्माण के संदर्भ में नवीन समाज-रचना, नूतन जीवन-मूल्यों की संस्थापना आदि के लिए नवीन मापदंडों का निर्धारण होने लगा । राष्ट्र की समृद्धि और अपेक्षित विकास के मार्ग में व्यवधान उपस्थित करनेवाली नानाविध बाधाएं- भुखमरी, अकाल, बाढ़, महामारी, बेकारी, मंहगाई, जनसंख्या-वृद्धि निरक्षरता आदि शीघ्र समाधान चाहती थीं । किसी भी राष्ट्र के विकास में उक्त बाधाएं उपेक्षित होने पर स्वस्थ राष्ट्र का निर्माण नहीं होने देतीं । तदर्थ शासन के साथ-साथ राष्ट्रीय कवियों ने साक्षरता अभियान और निरक्षरता के उन्मूलन में अभीष्ट योगदान दिया । इतना ही नहीं जाति-भेद, वर्ग-भेद और धर्म-भेद को समाप्त करने के उद्देश्य से समानता पर जनता का ध्यान केन्द्रित किया ।समाज में व्याप्त भुखमरी, बेकारी आदि को मिटाने के लिए श्रमदान, भूमि-सुधार,अधिक अन्न उपजाओ, हरित क्रांति, भूमिदान जैसे अभियानों के द्वारा आत्मनिर्भरता लाने का यत्न किया गया । जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण लाने के उद्देश्य से परिवार नियोजन जैसे अभियान को राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम के रूप में अपनाया जाने लगा । भारत के सामाजिक व आर्थिक विकास के उपलक्ष्य में शासन की ओर से पंचवर्षीय योजनाओं का प्रावधान हुआ । राष्ट्रीय कवियों ने इन योजनाओं की सफलता के लिए लोकगीतों व लोकधुनों में राष्ट्र की आवश्यकता एवं अनिवार्यता को प्रतिपादित

करने का यत्न किया । राष्ट्रीय कवियों ने इस संदर्भ में न केवल जन समाज को ही उत्प्रेरित किया अपितु जहां उन्होंने इन लक्ष्यों की पूर्ति में शासन को असावधान पाया वहां उसे भी सावधान करने का जागरूक यत्न किया । इतना ही नहीं लक्ष्य-भ्रमित शासकों के प्रति अपना असंतोष व्यक्त किया । उनकी वाणी कभी विद्रोहात्मक रूप भी धारण करती रही । `दिनकर`, `नवीन` तथा सोहनलाल द्विवेदी जैसे राष्ट्रीय कवि इनमें प्रमुख रहे ।

गांधी जी के सिद्धान्तों की छाया में विकासोन्मुख भारत राष्ट्र विश्वशांति एवं विश्व-मानवता की स्थापना के रंगीन स्वप्न देख रहा था । इतने में हिन्दी-चीनी भाई-भाई का नारा लगानेवाले साम्राज्यवादी चीन ने सन् १९६२ ई० में आकस्मिक आक्रमण करके भारतीय स्वतंत्रता एवं उसकी अखंडता पर कुठाराघात किया । चीन का यह आक्रमण मित्र राष्ट्र के प्रति न केवल विश्वासघात था अपितु मानवतावादी राष्ट्र के मुंह पर बर्बरतापूर्ण हिंसक तमाचा था । यद्यपि राष्ट्र इस अप्रत्याशित आक्रमण के लिए तैयार न था तथापि उसका वीरोचित प्रत्युत्तर देते हुए बलिदान और उत्सर्ग की भावनावाले भारतीय नवजवान देश की सीमाओं की सुरक्षा हेतु आत्मसमर्पण के लिए तत्पर रहे । माखनलाल चतुर्वेदी, दिनकर, गोपालदास नीरज, सुमन, अंचल आदि राष्ट्रीय कवियों की लौह-वर्षिणी वाणी जवानों में तेज के स्फुलिंग उगलने लगी । दिनकर की `परशुराम की प्रतीक्षा` इसी युद्ध की प्रेरणा के रूप में लिखी गयी कृति है । सन् १९६५ ई० में पाकिस्तान ने अकारण आक्रमण कर एक बार फिर से भारतीय यौवन को चुनौती दी । इस बार तो समस्त राष्ट्र उसकी स्वतंत्रता एवं अखंडता की सुरक्षा के लिए सचेष्ट था । तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व० लालबहादुर शास्त्री ने 'Come what may' का सूत्र देकर नवजवानों में अतुलनीय बलिदानी भावना का संचार किया । फलत: भारतीय जवानों ने अपूर्व उत्साह से युद्ध कौशल के द्वारा पाकिस्तान के अहंकार को चूर्ण कर दिया । राष्ट्रीय कवियों ने वीरोत्तेजक वाणी से आत्म विश्वास एवं आत्मबल उत्पन्न करते हुए

नवजवानों में शेर की गर्जना-सी विद्युत तरंगें भर दीं । देश की सामाजिक विषम स्थितियों पर करुणा एवं व्यथा के गीत गानेवाले कवि भैरवी गा उठे ।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी की राष्ट्रीय काव्यधारा का अनुशीलन करने पर प्रतीत होता है कि राष्ट्रीय कवि वर्तमानकालीन उक्त सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक परिस्थितियों के प्रति अधिक सचेष्ट है । विकासोन्मुख राष्ट्र की समृद्धि एवं समस्याओं की पूर्ति में उसे अधिक रुचि है । प्राक्स्वातंत्र्यकालीन राष्ट्रीय कवियों में अतीत के प्रति आकर्षण जिस गौरव में परिलक्षित किया गया है, वह आकर्षण स्वातंत्र्योत्तर युगीन राष्ट्रीय कवियों में नहीं है । अर्थात् अतीत के प्रति उनका लगाव सीमित है । आज के जटिल मानव-जीवन की समस्याओं को सुलझाने में वह अधिक उलझा है । उसके भावुक एवं स्पंदनशील हृदय में उक्त विभिन्न परिस्थितियों के प्रति कभी आक्रोश, उत्तेजना, विद्रोह के भाव उमड़ते हैं तो कभी भावात्मक एकता, विश्व-शक्ति एवं मानवता की स्थापना के मृदु-मधुर भावानुभूति होती है ।

स्वातंत्र्योत्तर राष्ट्रीय काव्यधारा की प्रवृत्तियों पर विचार करते हुए राष्ट्रीय कवियों के जो भिन्न दृष्टिकोण प्राप्त होते हैं उनके आधार पर उसे चार भागों में विभक्त किया जा सकता है । ये हैं -

१) नव-निर्माण मूलक कविताएँ ।
२) भावात्मक एकता ।
३) राष्ट्रीय सुरक्षा ।
और ४) शासनगत विकृतियों के प्रति विद्रोह तथा असंतोष ।

(१) <u>नव-निर्माण :</u>

राष्ट्र के नव-निर्माण के हेतु सर्वप्रथम जर्जरित समाज की प्रवर्तमान विभीषिकाओं का उन्मूलन आवश्यक होता है । इसके अभाव में वास्तविक

निर्माण कार्य संभवित नहीं होता । पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था के कारण निष्पन्न आर्थिक विषमता के प्रति व्यंग्य करते हुए महाकवि पंत गहरा प्रहार करते हैं -

'भूखा है कुछ पैसे पा, गुनगुना
खड़ा हो जाता वह
पिछले पैरों के बल उठ
जैसे कोई चल रहा जानवर ।'[१०३]

नागार्जुन व्यंग्य प्रहारों के लिए प्रसिद्ध हैं । सामाजिक विषमता से निष्पन्न ग्लानि, व्यथा और वेदनामूलक व्यंग करते हुए वे लिखते हैं -

'कागज की आजादी मिलती,
ले लो दो- दो आने में ।'[१०४]

स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात अपेक्षित समृद्धि के अभाव में कवि की खिन्नता गहरा व्यंग्य बनकर स्फुट हुई है ।

दुर्व्यवस्था मूलक चतुर्दिक परिवेश से असन्तुष्ट व पीड़ित कवि नूतन राष्ट्र-निर्माण के लिए परिवर्तन करना चाहता है । डॉ० रामविलास शर्मा परिवर्तन के लिए अपेक्षित क्रांति की आवश्यकता पर बल देते हुए कहते हैं -

'कुसंस्कृति भूमि एक किसान की
धरती के पुत्र की
जोतनी है गहरी दो-चार बार, दस बार
बोना महातिक्त बीज असन्तोष का
काटनी है नये साल फागुन में फसल जो क्रांति की ।'[१०५]

नव-निर्माण के लिए व्यवधान उपस्थित करनेवाली सामाजिक विषमता को दूर करने के लिए प्रहार करनेवाले पंत जी स्वस्थ निर्माण की ओर संकेत करते हुए कहते हैं -

'आओ, जन स्वतंत्र भारत को
जीवन उर्वर भूमि बनावें
उसके अंत: स्मित आनन से
तम का गुंठन भार उठावें ।
अह, इस सोने की धरती के
खुले आज सदियों के बन्धन,
मुक्त हुई चेतना धरा की
मुक्त बनें अब भू के जनकण ।'[१०६]

हे भारत । तू तो युगों से रक्तप्लावित मानव को मानवता की संजीवनी पिलाता आया है । देख । आज भी सर्वत्र हिंसा, द्वेष, कलह आदि से परिपूर्ण विश्व कराह रहा है । उसे पुन: संजीवनी प्रदान कर । नव-निर्माण मूलक कवि के ये विचार द्रष्टव्य हैं -

'आज रक्त लथपथ मानव तन
द्वेष कलह से पंकिल जनमन,
भारत, निज अंतप्रकाश का
पुन: पिलाओ नव संजीवन
भूत तमस में खोये जग को
फिर अंतर्पथ आज दिखाओ
मानवता के हृदय पद्म को
पंक मुक्त कर ऊर्ध्व उठाओ ।'[१०७]

कलुषतापूर्ण सामाजिक भेद एवं संघर्षों के स्थान पर निर्माणमूलक आस्था एवं आत्मसमर्पण की आतुरता की आवश्यकता पर बल देते हुए पंत जी कहते हैं -

'तुम्हें चाहिए प्राणों का पग
तुम्हें सत्य के प्रति आकर्षण
तुम्हें ईश के प्रति आत्मार्पण
विद्रोही रह,
करो कलुष से संगर,
निर्लिप्त स्व-मन में।'[१०८]

दिनकर जी भी नव-निर्माण मूलक राष्ट्र के सामूहिक अभियान में अपना स्वर मिलाते हुए उन वाणी-विहीन मानवों तक सच्चे अर्थों में स्वराज्य पहुंचाने के लिए निरंतर साधना करने को उपदिष्ट करते हैं। यथा-

'निर्भीक साधना करो,
वाणीविहीन शत-लक्ष मानवों को देखो,
इनका दुर्भाग्य स्वातंत्र्य समाहित कब होगा ?
कब तक पहुंचेगी ज्योति ?
तमिस्रा-ग्रसित मूक
मानवता का कब तक स्वराज्य संभव होगा ?'[१०९]

'समर शेष है' कविता में भी दिनकर जी प्रायः इसी भाव को व्यक्त करते हुए दृष्टिगत होते हैं। यहां कवि विद्रोही स्वर में कहते हैं -

'समर शेष है, इस स्वराज्य को सत्य बनाना होगा।
जिसका है यह न्यास, उसे सत्वर पहुंचाना होगा।
धारा के मग में अनेक पर्वत जो खड़े हुए हैं
गंगा का पथ रोक इन्द्र के गज जो अड़े हुए हैं,

कह दो उनसे झुके अगर तो जग में यश पायेंगे ।
अड़े रहे तो ऐरावत पत्तों से बह जायेंगे ।[११०]

पंडित सोहनलाल द्विवेदी ने भी राष्ट्र के नव-निर्माण के अनेक गीत लिखे हैं । उनका कवि भी राष्ट्र की वर्तमान स्थिति से व्यथित है और पीड़ित लोगों की स्थिति देखकर भी करुणारहित पाषाण हृदय पूंजीपतियों से कहते हैं -

खड़े द्वार पर नंगे भिखमंगों की
करुण पुकारों से -
ओ पत्थर की प्रतिमा ! पिघलो
अब तो हाहाकारों से ।[१११]

द्विवेदी जी के अन्य गीतों पर परवर्ती पृष्ठों में अध्ययन किया जायेगा ।

(२) भावात्मक एकता :

राष्ट्र के वास्तविक नव-निर्माण के लिए सर्वप्रथम आवश्यक शर्त है, राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति तथा उसके कण-कण से प्रेम होना । ऐसा निःस्वार्थ प्रेम ही राष्ट्र में भावात्मक एकता स्थापित कर सकता है । इसके अभाव में भारत की भौतिक समृद्धि व्यर्थ सिद्ध होगी । देश के समस्त जन-समुदाय में जाति भेद, वर्ग-भेद, आर्थिक वैषम्य का भेद आदि को भुलाकर गांधी एवं गौतम का प्यार एवं करुणा का भाव भर देना चाहिए । 'मृत्ति तिलक' में दिनकर जी संभवतः यही भाव व्यंजित करने का यत्न करते हैं -

देशों में यदि सर्वोच्च देश बनना चाहो,
पहले, सबसे बढ़कर , भारत को प्यार करो ।
यह विजय विजय है तभी,
देश भर के जन-जन के मन:प्राण

भारत के प्रति हों भक्तिपूर्ण,
प्रत्येक देश प्रेमी अपना
सर्वस्व देश-पद पर धर दे,
जिसमें जो भी हो तेज
आज वह उसको न्यौछावर कर दे ।'[११२]

तथा- सत्य -हेतु निष्ठा अशोक की, गौतम का प्रण दो
मन-मन मिलते जहाँ देवता । वह विशाल मन दो ।
देख सकें सबमें अपने को,
महामनुजता के सपने को ।'[११३]

'परशुराम की प्रतीक्षा' में भी दिनकर जी एक काव्य में ऐसा ही भाव व्यंजित करते हुए कहते हैं -

एक बार फिर स्वर दो ।
उन्हें पुकारो, जो गांधी के सखा, शिष्य, सहचर हैं ।
कहो आज पावक में उनका कंचन पड़ा हुआ है ।
प्रभापूर्ण होकर निकला यह तो पूजा जावेगा,
मलिन हुआ तो भारत की साधना बिखर जाएगी ।[११४]

पं० सोहनलाल द्विवेदी की भावात्मक एकता स्थापित करनेवाली अनेक कविताएं हैं । प्रसंगवश एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है । मृत्युंजय शंकर की प्रशस्ति गाते हुए वे राष्ट्र के निर्माण एवं कल्याण कामना से प्रेरित होकर उन्हें जन-जन के मानस में समाहित हो जाने के लिए प्रार्थना करते हैं । यथा-

उतरो जननी के जन-जन में,
उतरो मानव के मन-मन में,

पाकर के तप त्याग तुम्हारा
बढ़े देश फिर पथ पर तेरे ।
जय हो हे मृत्युंजय मेरे ।`११५

(३) राष्ट्रीय सुरक्षा :

जब कभी राष्ट्र की स्वतंत्रता एवं उसकी अखंडता पर आक्रमण कर उसे नष्ट करने के लिए पड़ोसी राष्ट्रों के द्वारा शत्रुवत् व्यवहार किया जाता है तब राष्ट्र की सुरक्षा का प्रश्न उपस्थित हो जाता है । इस संदर्भ में राष्ट्र की सीमाओं की निरंतर सुरक्षा करना राष्ट्र का पुनीत कर्तव्य बन जाता है । यह उल्लेख किया जा चुका है कि जब १९६२ ई० और १९६५ ई० में क्रमश: चीन एवं पाकिस्तान जैसे पडोसी राष्ट्रों ने भारत की स्वतंत्रता एवं अखंडता पर प्रहार किया तब भारतीय जवानों की देश-भक्ति जागृत हो गई । राष्ट्रीय कवियों ने भी शत्रुओं का दांत खट्टा करने के लिए त्याग व बलिदान की राष्ट्रीय भावना को उजागर करते हुए देश की मतवाली जवानी को पुन: एक बार झकझोर दिया । `दिनकर` की `परशुराम की प्रतीक्षा` तो चीनी आक्रमण से प्रेरणा प्राप्त करके ही लिखी गई कृति है । शत्रुओं का वीरत्वपूर्ण प्रतिकार करने के लिए कवि कैसी गर्जना करते हैं- यह दृष्टव्य है -

`सामने देश माता का भव्य चरण है,
जिह्वा पर जलता हुआ एक, बस, प्रण है,
कटिंगे अरि का मुंड कि स्वयं कटेंगे,
पीछे परन्तु, सीमा से नहीं हटेंगे ।`११६

और- `गरजो, अम्बर को भरो रणोच्चारों से
क्रोधांध शेर, हांकों से हुंकारों से ।
यह आग मात्र सीमा की नहीं लपट है,
मूढ़ो । स्वतंत्रता पर ही यह संकट है ।`११७

कवि का दृढ़ मंतव्य है कि जब राष्ट्र की सुरक्षा का प्रश्न उपस्थित हो गया हो तब योगियों जैसा विरक्त जीवन जीने की अपेक्षा विजयी दर्पयुक्त वीर सिपाही का जीवन जीना चाहिए । क्योंकि यह तो राष्ट्र के अस्तित्व का प्राण-प्रश्न है । इस भाव को व्यंजित करनेवाली कवि की ये पंक्तियां द्रष्टव्य हैं -

वैराग्य छोड़ बाँहों की विभा संभालो
चट्टानों की छाती से दूध निकालो ।
है रुकी जहाँ भी धार शिलाएँ तोड़ो,
पीयूष चन्द्रमाओं को पकड़ निचोड़ो ।

चढ़ तुंग शैल-शिखरों पर सोम पियो रे !
योगियों नहीं, विजयी के सदृश जियो रे ।'[११८]

पं० सोहनलाल द्विवेदी देश की सुरक्षा के लिए सावधान करते हुए उन नवजवानों से कहते हैं -

'घिर रहीं आंधियां दसों दिशा से
इसे बुझाने को,
चल रहा प्रभंजन जोर शोर से
इसे मिटाने को,
बन लोहे की चट्टान खड़े हों
इसे बचाने को ।
+ +
देखना, तुम्हारे आस-पास
कोई जयचन्द न हो ।
प्राणों का स्नेह चढ़ाने की
यह धारा बन्द न हो ।[११९]

पड़ोसी राष्ट्रों के आक्रमण से राष्ट्र की स्वतंत्रता एवं अखंडता खतरे में पड़ी है। स्वाधीनता-प्राप्ति के बाद अब युद्ध की जरूरत नहीं है, यह समझनेवाले जवानों से ~~उद्बोधन~~ उद्बोधन करते हुए कवि उन्हें सावधान करते हैं -

'सावधान ओ देशवासियो, अभी न युद्ध विराम है।
युद्ध बन्द है नहीं, युद्ध का यह केवल विश्राम है।
दगाबाज़ दुश्मन है, धोखा देना उसका काम है।
सावधान ओ देशवासियो, अभी न युद्ध विराम है।
जागरूक रहना है प्रहरी, सब आराम हराम है।
सावधान ओ देशवासियो, अभी न युद्ध विराम है।'[१२०]

वीर नवयुवकों का धर्म राष्ट्र की सुरक्षा करते हुए आत्मसमर्पण ही है यह निर्दिष्ट करते हुए दिनकर जी 'रश्मिरथी' में कहते हैं -

'है धर्म पहुंचना नहीं, धर्म तो
जीवन भर चलने में है,
फैलाकर पथ पर स्निग्ध ज्योति
दीपक-समान जलने में है।'[१२१]

(४)शासनगत विकृतियों के प्रति विद्रोह तथा असंतोष :

राष्ट्र के विकासोन्मुख नव-निर्माण के पुनीत कार्य में राष्ट्रीय कवि पूर्णतया जागृत है। वह विकास मार्ग में व्यवधान उपस्थित करनेवाली समाज की विषम परिस्थितियों के प्रति जैसे प्रतिक्रियात्मक विद्रोह व्यक्त करता है, वैसे ही इस दिशा में शासन की ओर से शीघ्र लक्ष्य पूर्ति के लिए आशा-अपेक्षा रखता है। किन्तु जब कभी उन आकांक्षाओं को पूर्ण होते हुए वह नहीं देखता है या उसमें शासन की

उपेक्षा वृत्ति विलंब सहन नहीं कर सकता है । तदर्थ कवि वर्तमान शासन व्यवस्था एवं शासकों की उपेक्षावृत्ति के प्रति आक्रोश व्यक्त करते हुए उन लक्ष्य-भ्रान्त शासकों को भी जगाने का यत्न करता है । माखनलाल चतुर्वेदी की ये प्रसिद्ध पंक्तियां शासकों के द्वारा विस्मृत अपनी प्रतिज्ञाओं को याद दिलाने में कितनी प्रभावपूर्ण हैं । यथा-

`लो हम यादों के तरु-तृण-पल्लव सब छोड़ चले
अपथैरावी के तट खाईं, यमुना के तट तोड़ चले ।`[१२२]

माखनलाल चतुर्वेदी की यह व्यंग्योक्ति आ० हिंदी साहित्य में अत्यधिक प्रसिद्ध रही ।

दिनकर जी तो विद्रोहात्मक स्वर में शासन सत्ता से सीधा प्रश्न करते हुए अभिधात्मक वाणी में पूछते हैं -

`अटका कहाँ स्वराज ? बोल दिल्ली । तू क्या कहती है ?
तू रानी बन गयी, वेदना जनता क्यों सहती है ?
सबके भाग दबा रखे हैं किसने अपने कर में ?
उतरी थी जो विभा, हुई बन्दिनी, बता किस घर में ?
समर शेष है, यह प्रकाश बन्दी-गृह से छूटेगा,
और नहीं तो तुझ पर पापिनी । महावज्र टूटेगा ।`[१२३]

पंडित सोहनलाल द्विवेदी की `आत्मचिन्तन`, `झण्डे फहराने वालो ।
`मुझे भरोसा रहा नहीं अब दिल्ली के दरबार का` जैसी अतिप्रसिद्धि रचनाएँ आ० हिंदी काव्य जगत में अपना स्थान रखती हैं । इन रचनाओं के संदर्भ में परवर्ती पृष्ठों में सविस्तर अध्ययन प्रस्तुत होगा । यहां केवल कुछ पंक्तियाँ उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं -

`ओ गणतन्त्र मनानेवाले,
ओ जनतंत्र गीत के गायक,

पीछे हटो, बढ़ो मत आगे
बन जनता के उन्नायक,
स्वयं सुधारो तुम अपने को
ओ सुधारवादी नेता,
कथनी और, और करनी है
आज रहे तुम किस लायक ?' १२४

देश की आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक विषम परिस्थितियों के रहते हुए भी शासक अत्यन्त प्रसन्नता के साथ गणतंत्र दिवस मनाने का सगर्व यत्न करते हैं तब द्विवेदी जी की चेतना इस उद्भ्रान्त मन: स्थिति वाले शासकों से जैसे खुला विद्रोह करते हुए कहते हैं -

'ऐ लाल किले पर झण्डे फहरानेवालों।
सच कहना कितने साथी साथ तुम्हारे हैं ?
क्या आज खुशी की लहर देश में है सचमुच
उठ रहे खुशी के सचमुच ऊंचे नारे हैं ?
ये झूठी खुशियाँ और मनाओ आज नहीं
दिन आज खुशी का नहीं, दुखी दिलवालों का ।
पीछे झण्डा फहराना है झण्डे वालो,
पहले जवाब दो मेरे चन्द सवालों का ।' १२५

और- 'अधिकारों से मोह न
जिम्मेदारी की परवाह है,
शासन अपने हाथ रहे
केवल यह मन में चाह है,
जिसके दिल को भेद नहीं
पाती जनता की आह है,

जिसे जीत की चिन्ता है पर, ध्यान नहीं है हार का ।
मुझे भरोसा रहा नहीं अब दिल्ली के दरबार का । [१२६]

समग्र अध्याय के अंतर्गत विवेचित राष्ट्रीय जागरण की विकासात्मक पृष्ठभूमियों का अनुशीलन करने पर यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि राष्ट्रीय चेतना का जागरण, जो भारतेन्दु युग से प्रारंभ हुआ था, द्विवेदी युग, छायावाद युग, छायावादोत्तर युग तथा स्वातंत्र्योत्तर युग पर्यन्त विविध राष्ट्रीय परिस्थितियों से गुजरता हुआ निरंतर विकासोन्मुख रहा । अर्थात् वह जिस लक्ष्य की पूर्ति को लेकर उत्पन्न हुआ था, उसे प्राप्त कर लेने के बाद भी अद्यावधि राष्ट्र के विविध पक्षों एवं समस्याओं के समाधान के साथ संलग्न रहा है । राष्ट्रीय काव्यधारा का प्रवाह निरंतर प्रवहमान रहा है । आधुनिक हिंदी काव्य की विकास रेखा में उपर्युक्त अनेक पद मानदंड बदलते रहे किन्तु राष्ट्रीय काव्यधारा का प्रवाह किसी वाद की सीमा में आबद्ध हुए बिना नित्य निरंतर अस्खलित रूप से प्रवहमान रहा ।

हमारे आलोच्य कवि पंडित सोहनलाल द्विवेदी, जो आधुनिक राष्ट्रीय काव्यधारा के उज्ज्वल रत्न हैं, सन् १९२०-२१ से अपनी काव्य-यात्रा प्रारंभ करके अद्यावधि लिखते रहे हैं । सुदीर्घ कालावधि पर्यन्त राष्ट्रीय काव्य लिखकर निरंतर राष्ट्र की सेवा में वे रत रहे हैं । आधुनिक हिन्दी काव्य में निराला, पंत, दिनकर प्रभृति ऐसे प्रतिभा संपन्न कवि भी उत्तरोत्तर बदलती हुई राष्ट्रीय परिस्थितियों में अपने चिन्तन को बदलते रहे हैं, किन्तु द्विवेदी जी प्रारंभ से ही गांधीवादी चिंतन एवं दर्शन से प्रभावित होकर एक निष्ठावान राष्ट्र कवि के रूप में काव्य-सर्जन करते रहे हैं । आज भी वे उसी गांधीवादी चिंतन के समर्थक रहे हैं । अर्थात् प्रारंभ से ही उनका चिंतन स्वस्थ, स्पष्ट एवं प्रौढ़ रहा है । परिवर्तित परिस्थितियों में उनका अभिव्यंजना कौशल बदलता रहा है किन्तु चिन्तन एक ही गांधीवादी सिद्धांत पर आधारित रहा है । गांधीवाद के सशक्त संपोषक राष्ट्रकवि के काव्य का अनुशीलन हमारा प्रमुख विषय होने से परवर्ती अध्यायों में उन पर विशद विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है ।

--

संदर्भ सूची :

१- `काव्य संकलन के द्वितीय भाग की भूमिका` संपादक- डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-१००

२- हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियां, डा० जयकिशन प्रसाद, पृ० २८५

३- डा० केशरीनारायण शुक्ल`आधुनिक काव्य धारा`, पृ० १३

४- स्फुट कविता,`जाती गीत`-बालमुकुन्द गुप्त, पृ० ६१

५- भारतेन्दु नाटकावली, भारत दुर्दशा, पृ० ५६८

६- डा० देवराज शर्मा,`हिन्दी की राष्ट्रीय काव्यधारा:एक समग्र अनुशीलन`, पृ० १४३

७- भारतेन्दु जी-`बालबोधिनी`, डा० केसरीनारायण शुक्ल`आधुनिक काव्यधारा` पृ०४६ से उद्धृत ।

८- डा० देवराज शर्मा,`हिन्दी की राष्ट्रीय काव्यधारा:एक समग्र अनुशीलन, पृ० १४१-४२

९- `उठो आर्य संतान सकल मिलि बस न विलम्ब लगाओ,
ब्रिटिश राज स्वातंत्रमय समय व्यर्थ न बैठि बिताओ ।(बदरीनारायण चौधरी`प्रमघन`)
डा० केसरीनारायण शुक्ल,`आधुनिक काव्यधारा,पृ०२२ से उद्धृत ।

१०- `तुव शासन के समय जगत जो उन्नति पावौ,
ज्ञान विज्ञान कला कौशल काल जो प्रगटायौ ।
जो कबहुं सुनी नहिं कानसौं रविरथ हूं थिर रहै रह्यौ ।
या साठ बरस के बीच मैं सो सुख संपति जग लह्यौ ।(राधाकृष्णादास)
-राधाकृष्णादास ग्रंथावली, जुबिली, पृ० १६

११- श्रीधर पाठक,`मनोविनोद`, पृ० १५

१२- श्री रामनरेश त्रिपाठी, डा० जयकिशनप्रसाद की`हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ पृ० ३२२ से उद्धृत ।

१३- श्री मैथिलीशरण गुप्त,`भारत-भारती`, पृ० १०

१४- डा० केशरीनारायण शुक्ल,`आधुनिक काव्यधारा`, पृ० ११२ से उद्धृत ।
१५- सम्पा० डा० विनय,`निबन्धालोक`,`हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय भावना, शीर्षक निबन्ध, पृ० २८
१६- श्री मैथिलीशरण गुप्त,`भारत-भारती`(भविष्यत् खण्ड)पृ० १६२-६३
१७- वही, पृ० १७०
१८- डा० कैसरीनारायण शुक्ल,`आधुनिक काव्यधारा`, पृ० ९६
१९- वही, पृ० ९७
२०- श्री मैथिलीशरण गुप्त,`भस्त्रनि भारत भारती`,
२१- वही, पृ० ५५
२२- डा० जयकिशनप्रसाद`हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियां`, पृ० ३२२-२३
२३- श्री मैथिलीशरण गुप्त,`भारत भारती`, पृ०१७४
२४- डा० कैसरीनारायण शुक्ल, आधुनिक काव्यधारा, पृ० ९७
२५- मैथिलीशरण गुप्त,`भारत-भारती, पृ०
२६- श्रीधर पाठक,`मनोविनोद`, पृ० ७६
२७- सम्पा० धीरेन्द्र वर्मा,`हिन्दी साहित्य कोश`भाग-१ शंभूनाथ सिंह, छायावाद शीर्षक, पृ० ३२५
२८- जयशंकर प्रसाद,`स्कंदगुप्त`(पंचम अंक) पृ० १६२-६३
२९- सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला,`परिमल`,`जागो फिर एक बार`(शीर्षक) पृष्ठ-२०३
३०- सुमित्रानंदन पंत,`ग्राम्या`,`संस्कृति का प्रश्न`(शीर्षक), पृ० ८९
३१- जयशंकर प्रसाद,`चन्द्रगुप्त`(द्वितीय खण्ड अंक), पृ० ८९
३२- वही, स्कंदगुप्त(पंचम अंक) पृ० १६३
३३- सूर्यकांत त्रिपाठी(निराला)`गीतिका`, पृ० ७३
३४- वही, पृ० ९७
३५- सम्पा० डा० विजयेन्द्र स्नातक,`काव्य पारिजात,पृ० ५१
३६- वही, पृ० ५२

३७- जयशंकर प्रसाद, `चन्द्रगुप्त` (चतुर्थ अंक) पृ० १७७
३८- सूर्यकांत त्रिपाठी (निराला), `परिमल`, पृ० २०३
३९- वही, `परिमल` (बादल राग-६) पृ० १८८ से उद्धृत ।
४०- सुमित्रानंदन पंत, `युगांत`, पृ० १६
४१- वही, पृ० ५४
४२- सुमित्रानंदन पंत, `युगांत, `बापू के प्रति` (शीर्षक) पृ० ६२
४३- वही, पृ० ६३
४४- वही, पृ० ६३
४५- डा० विजयेन्द्र स्नातक, `काव्य पारिजात`, पृ० ८७
४६- डा० वेदभानु आर्य, `चुने हुए कवि और लेखक`, पृ० १५२
४७- शिवमंगल सिंह सुमन, `प्रलय सृजन`, `नाविक से` (शीर्षक) पृ० ४६
४८- वही, पृ० ४७
४९- शिवमंगल सिंह सुमन, `हिल्लोल`, `चलना हमारा काम है` (शीर्षक) पृ० ३७-३८
५०- वही, पृ० ११५
५१- वही, `प्रलय सृजन`, `बेघरबार` (शीर्षक), पृ० ८
५२- रामेश्वर शुक्ल अंचल, `अपराजिता`, पृ० ३७
५३- आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी, `हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी`, पृ० २३२
५४- सम्पा० रामेश्वर शुक्ल `अंचल`, `काव्य संग्रह` (द्वितीय भाग की भूमिका) पृ० ५९
५५- प्रो० रामेश्वर शुक्ल अंचल, `काव्य संग्रह (द्वितीय भाग) में नरेन्द्र शर्मा कृत `प्रभातफेरी` पृ० २०२
५६- नरेन्द्र शर्मा, `मिट्टी और फूल`, `युग और मैं` (शीर्षक), पृ० ६२-६३
५७- वही, पृ० ६१
५८- वही, `रक्त चंदन`, `अहिंसा क्रांति` (शीर्षक) पृ० १३
५९- नरेन्द्र शर्मा, `रक्तचंदन`, `महात्मागांधी` (शीर्षक), पृ० २५
६०- डा० केसरीनारायण शुक्ल, `आधुनिक काव्य धारा`, पृ० १७२
६१- डा० प्रतापनारायण टंडन, `हिंदी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास`, पृ० ३२१-२२
६२- डा० वेदभानु आर्य, `चुने हुए कवि और लेखक`, पृ० १३४

६३- डा० देवराज शर्मा, `हिंदी की राष्ट्रीय काव्यधारा :(एक समग्र अनुशीलन)
पृ० २६३
६४- रामनरेश त्रिपाठी, `स्वप्न` (खण्डकाव्य)-`स्वदेश प्रेम` शीर्षक, पृ०
६५- वही, पृ०
६६- मध्यप्रदेश हिन्दी बाल-भारती, भाग-७, राजकीय प्रकाशन, डा० देवराज शर्मा, हिंदी की राष्ट्रीय काव्यधारा` से उद्धृत, पृ०२६६
६७- सम्पा० श्रीचन्द, `जयहिंद काव्य`,
- नवीन युग, शीर्षक, पृ०२१
६८- सम्पा० श्री चन्द, `जयहिंद काव्य`-`कामना` शीर्षक, पृ० २४
६९- डा० जयकिशन प्रसाद, `हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियाँ` पृ० ३२६
७०- माखनलाल चतुर्वेदी, `समर्पण`-`युग और तुम` शीर्षक कविता, पृ० २१-२२
७१- ,, `हिम किरीटिनी`, पृ० २८
७२- ,, `युगचरण`-`सत्याग्रही` शीर्षक कविता, पृ० ४४
७३- ,, `युगचरण`-`मेरा व्रत पूजन` शीर्षक कविता, पृ० ५५
७४- सियाराम शरण गुप्त, `आत्मोत्सर्ग`, पृ० ६६
७५- वही, `जयहिंद` पृ०३७
७६- सियारामशरण गुप्त `उन्मुक्त` पृ० १५८
७७- वही, `बापू` पृ०
७८- वही, पृ०
७९- डा० वेदभानु आर्य, `चुने हुए कवि और लेखक`, पृ० १३०
८०- डा० केसरीनारायण शुक्ल, `आधुनिक काव्यधारा`, पृ० १७३
८१- डा० जयकिशनप्रसाद, `हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, पृ० ३३१
८२- डा० जयकिशनप्रसाद, `हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, पृ०३३०
८३- डा० देवराज शर्मा, `हिंदी की राष्ट्रीय काव्यधारा: एक समग्र अनुशीलन`
पृ० २४२
८४- सुभद्राकुमारी चौहान, `झाँसी की रानी`
८५- डा० जयकिशनप्रसाद, `हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, पृ०३२८

८६- सुभद्राकुमारी चौहान, `उमंग` पृ० ६८
८७- वही, `मुकुल`, पृ० ६४
८८- डा० वेदभानु आर्य, `चुने हुए कवि और लेखक` पृ०१२६
८९- वही, पृ० १२७
९०- डा० वेदभानु आर्य, `चुने हुए कवि और लेखक` पृ०१५८ से उद्धृत ।
९१- श्यामनारायण पांडेय, `हल्दीघाटी`, पृ० १५
९२- रामधारीसिंह दिनकर, `रेणुका` `कस्मैदेवाय` (शीर्षक) पृ० ३१
९३- वही, `हुँकार` - `विपथगा` काव्य, पृ० ३८
९४- वही, `रेणुका`, `हिमालय` (शीर्षक) पृ० ७
९५- रामधारी सिंह दिनकर, `हुँकार`, विपथगा` (शीर्षक) पृ० ३९
९६- वही, `रेणुका`, `हिमालय` (शीर्षक) पृ० ७-८
९७- `बापू` - दिनकर (भूमिका)
९८- युगचारण दिनकर, सावित्री सिन्हा, पृ० १४२
९९- `बापू` -दिनकर-पृ०३-४
१००- वही, पृ० १८
१०१- सामधेनी-दिनकर, पृ० ३१
१०२- युगचारण दिनकर, सावित्री सिन्हा, पृ० १५५
१०३- डा० जयकिशनप्रसाद, `हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियां, पृ० ४७२
१०४- वही,
१०५- वही,
१०६- श्री सुमित्रानंदन पंत, `युगांतर`, पृ० १००
१०७- वही, पृ० १०२
१०८- वही, पृ० ९९
१०९- श्री रामधारीसिंह दिनकर, `मृत्तितिलक`, `सर्ग-सन्देश` (शीर्षक) पृ० ३९
११०- वही, `परशुराम की प्रतीक्षा`, `समर शेष है` (शीर्षक) पृ० ७७

१११- पं० सोहनलाल द्विवेदी,`मुक्तिगंधा`,`ओ पत्थर की प्रतिमा पिघलो`
(शीर्षक) पृ० २३

११२- श्री रामधारी सिंह दिनकर,`मृत्तितिलक`,`सर्ग-संदेश`(शीर्षक) पृ० ३६

११३- वही, पृ० ३२

११४- वही, `परशुराम की प्रतीक्षा`,`एक बार फिर स्वर दो`(शीर्षक)
पृ० ७२

११५- पं० सोहनलाल द्विवेदी,`मुक्तिगंधा`,`जय हो`(शीर्षक) पृ० २६

११६- श्री रामधारी सिंह दिनकर,`परशुराम की प्रतीक्षा`, पृ० ७

११७- वही, पृ० ८

११८- वही, पृ० १८

११९- पं० सोहनलाल द्विवेदी`मुक्तिगंधा`,`ज्वाला मन्द न हो`(शीर्षक)पृ०२१

१२०- वही, `सावधान हो देशवासियो`(शीर्षक) पृ० ७०-७१

१२१- श्री रामधारीसिंह दिनकर,`रश्मिरथी`(षष्ठ सर्ग) पृ० १२६

१२२- माखनलाल चतुर्वेदी,

१२३- श्री रामधारीसिंह दिनकर,`परशुराम की प्रतीक्षा`,`समर शेष है`
(शीर्षक) पृ० ७७

१२४- पं० सोहनलाल द्विवेदी,`मुक्तिगंधा`,`आत्मचिन्तन`(शीर्षक) पृ० ३३

१२५- वही, `झण्डे फहरानेवालो`(शीर्षक) पृ० ३६

१२६- वही, `दिल्ली दरबार`(शीर्षक) पृ० ५१